Nagari Pracharini Granthamala Series No. 1.

श्री ध्रुवदास कृत

भक्तनामावली

जिसे

भक्तों के संक्षिप्त जीवनचरित सहित

श्री राधाकृष्ण दास

ने

सम्पादित किया

और

काशी नागरीप्रचारिणी सभा

ने

प्रकाशित किया

1901.

INTED AT THE INDIAN PRESS, AL AHABAD.

[मूल्य ॥)

भक्तों के नामों का सूचीपत्र

-:०:--

व्यास जी की वाणी से

१ स्वामी हरिदास
२ हित हरिवंश
३ रूप
४ सनातन
५ कृष्णदास
६ मीराबाई
७ जयमल
८ परमानन्ददास
९ सूरदास
१० नामदेव
११ सेन
१२ धना
१३ रैदास
१४ कबीर
१५ पीपा
१६ मङ्गलभट्ट
१७ मेहा
१८ आसधीर (धाम)
१९ रामानन्द
२० सुर सुरानन्द
२१ तिलोचन
२२ खेम
२३ रघू
२४ रघुनन्द
२५ कृष्णदास
२६ हरिदास

भगवत रसिक जी लिखित भक्तनामावली से

१ कामदेव
२ रति
३ गणेश जी
४ ब्रह्मा
५ शिव
६ नारायण
७ वाल्मीकि
८ नारद
९ अगस्त
१० शुकदेव

११ वेदव्यास
१२ सूत
१३ सेवरी
१४ स्वपच
१५ वशिष्ठ
१६ बिदुर
१७ बिदुर की स्त्री
१८ गोपी
१९ गोप
२० द्रोपदी
२१ कुन्ती
२२ पांडव
२३ ऊधव
२४ विष्णुस्वामी
२५ निम्बार्क
२६ माध्वाचार्य
२७ रामानुज
२८ लालाचारज
२९ धनुरदास
३० कूरेस
३१ ज्ञानदेव
३२ तिलोचन
३३ जयदेव
३४ चिन्तामणि
३५ विल्वमङ्गल
३६ केशव भट्ट
३७ श्री भट्ट
३८ नारायण भट्ट
३९ गदाधर भट्ट
४० गोशाईं विट्ठलनाथ
४१ बल्लभाचार्य
४२ गूजर जाठ
४३ नित्यानन्द
४४ अद्वैत
४५ कृष्णचैतन्य
४६ गोपाल भट्ट
४७ रघुनाथ गोशाईं
४८ मधु गोशाईं
४९ रूप गोशाईं
५० सनातन गोशाईं
५१ व्यास जी
५२ गोशाईं हरिवंश
५३ हरिदास स्वामी
५४ विट्ठल विपुल
५५ विहारिनिदास
५६ नागरीदास
५७ नवलदास
५८ माधुरीदास
५९ वल्लभ (रसिक)
६० तानसेन
६१ अकबर
६२ करमैती
६३ मोराबाई
६४ करमाबाई
६५ रत्नावती
६६ मीर
६७ माधो
६८ रसखान
६९ अग्रदास
७० नाभाजी

मलूकदास जी के "ज्ञानबोध" ग्रन्थ से

१ शङ्कर
२ नारद
३ शुकदेव
४ सनक
५ सनन्दन
६ शेष
७ अम्बरीष
८ बलि
९ बेदव्यास
१० पांडव
११ द्रौपदी
१२ ध्रुव
१३ प्रह्लाद
१४ विदुर
१५ भीष्म
१६ हनूमान
१७ अक्रूर
१८ सुदामा
१९ सेवरी
२० मोरध्वज
२१ तिमिरध्वज
२२ ऊधव
२३ रैदास
२४ कबीर
२५ नामदेव
२६ माधोदास
२७ धना
२८ पीपा
२९ सेन
३० मीराबाई
३१ धर्म (?)
३२ खातम मियां (?)
३३ नान्हक
३४ सूरदास
३५ परमानन्द स्वामी
३६ रामानन्द
३७ जयदेव
३८ तिलोचन
३९ दादू
४० चत्रभुज दास
४१ प्रेमदास
४२ रामदास
४३ मुरारीदास
४४ कामांदास
४५ दरियानन्द
४६ रांका
४७ बांका
४८ कूवा
४९ मकरन्द
५० कान्हा
५१ सदन
५२ देवल
५३ केवल
५४ परसा
५५ सोभू
५६ मुन्द्रक (?)
५७ अर्जुी ज्ञानो (?)
५८ नरसी

५९ मिर्ज़ा सालेह (?)
६० तुलसीदास
६१ अजामिल
६२ गणिका
६३ बिल्व मङ्गल
६४ गोपाला
६५ जड़ भरत
६६ जनक

राजा नागरीदास जी के "पदप्रसङ्गमाला" से

१ जयदेव
२ परमानन्द दास
३ नामदेव
४ कबीर
५ रैदास
६ नरसी
७ मीराबाई ✓
८ चतुरदास उपनाम खोजो
९ मुरारिदास
१० राघोदास
११ तुलसीदास
१२ मानिकचन्द
१३ छीतस्वामी
१४ व्यासजी
१५ हित हरिवंश
१६ सूरदास
१७ हरिदास स्वामी
१८ कृष्णदास अधिकारी
१९ कुम्भनदास
२० चतुर्भुजदास
२१ गदाधर भट्ट
२२ सूरदास मदनमोहन ✓
२३ खड्गसेन
२४ नरबाहन
२५ मधुकर शाह
२६ नागरीदास (बरसानेवाले)
२७ भगवान हित रामराय
२८ बीरबल
२९ किशोरीदास
३० श्यामदास
३१ नारायनदास
३२ राजा रूप सिंह
३३ तुलाराम उपनाम बावरो सखी
३४ राजा नागरीदास
३५ वल्लभरसिक
३६ गौरी गूजरी

उपक्रमणिका

—:०:०:—

धर्म ही मनुष्य जीवन का मूल है; धर्म ही के द्वारा मानव जीवन के विद्या, सभ्यता ग्रैार कला कैाशल का विकाश तथा धर्म परिवर्तन द्वारा ही संसार का परिबर्तन एवं धर्म विप्लव द्वाराही संसार का विनाश होता ग्राया है, विशेष कर भारतवर्ष के साथ तो धर्म का ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि यहां की कोई बात भी धर्मातिरिक्त नहीं हैं। वैदिक समय से लेकर ग्रब तक कितनेही धर्मविषयक परिवर्तन इस देश में हुए, ग्रैार इसी धर्म परिवर्तन इतिवृत्त को ही धर्म ग्रन्थों से संग्रह करके वर्तमान समय में ऐतिहासिकों ने ग्रनेकानेक इतिहासतत्वों का ग्रनुसन्धान किया है। वैदिक समय से पैाराणिक ग्रैार फिर जैन तथा बैाद्ध ग्रैार उसके पीछे फिर शाङ्कर तथा बैष्णव परिवर्तन के इतिहास संस्कृत ग्रन्थों में मिलते हैं, परन्तु वर्तमान समय के धर्माचार तथा ऐतिहासिक तत्वों का ग्राधार मुसलमानी ग्राक्रमण के पीछे, संस्कृत की चर्चा कम हो जाने के कारण, विशेष कर हिन्दी ही के धर्मग्रन्थों पर निर्भर हैं। इनमें प्रधान ग्रन्थ नाभाजी कृत "भक्तमाल" है। इसने ऐतिहासिकों को कितनी सहायता दी है यह इतिहासरसिक सज्जन मात्र जानते हैं। इस ग्रन्थ का इतना बड़ा ग्रादर हुग्रा कि महाराष्ट्री, बङ्गला ग्रादि देश भाषाग्रों के ग्रतिरिक्त इसका ग्रनुवाद संस्कृत में भी हो गया ग्रैार टीकाग्रों का तो कहना ही क्या है, कई एक टीकाएं बन गईं।

"भक्तमाल" के ग्रतिरिक्त भाषा में ग्रैार भी कई एक ग्रन्थ इस विषय के सहायक हैं, जिनपर ग्रभीतक लोगों की विशेष दृष्टि नहीं पड़ी है; उन्हींमें से एक ग्रन्थ यह "भक्तनामावली" है। इसे सुप्रसिद्ध गोस्वामि हित हरिवंश जी के शिष्य ध्रुवदास जी ने बनाया था। इसके बनने का समय विक्रमीय सोलहवीं शताब्दी का ग्रंत ग्रैार सत्रहवीं शताब्दी का ग्रारम्भ है। इन ग्रन्थों

के समय आदि पर आगे चलकर यथास्थान विचार होगा, इसलिये यहां पर विशेष नहीं लिखा जाता। इन ग्रन्थों में यदि ग्रन्थ-कर्ताओं ने वर्णित महात्माओं का जन्म आदि का समय भी दे दिया होता तो ये विशेष उपकारी हो जाते, परन्तु ऐसा न करने पर भी यह तो निश्चय ही है कि इसमें वर्णित महात्मागण सम्वत् १६८०-९० के पहिले के हैं। इसके अतिरिक्त यदि विशेष ध्यान पूर्वक देखा जाय तो वर्तमान क्रिया तथा भूत क्रिया के प्रयोग से बहुतेरे लोगों का समय कुछ कुछ निर्णय भी हो जाता है, तथा बहुतेरे राजाओं और बादशाहों के नामों से भी बहुत कुछ समय का निर्णय होता है।

यद्यपि "भक्तनामावली" में बहुतेरे ऐसे महात्माओं के चरित्र वर्णित हैं जिनका वर्णन पुराणों तथा "भक्तमाल" आदि ग्रन्थों में हुआ है, तथापि बहुतेरे ऐसे भी हैं जिनका वर्णन कहीं नहीं मिलता, तथान्च ऐसे भी बहुत से महात्मा हैं जिनसे श्री वृन्दाबन में निवास के कारण ध्रुवदास जी का विशेष परिचय था, इसलिये भी यह ग्रन्थ विशेष आदरणीय है। इसके अतिरिक्त ओड़छे वाले व्यास जी की वाणी, श्री हरिदास स्वामी के शिष्य भगवत-रसिक जी लिखित "भक्तनामावली," मलूकदास जी रचित "ज्ञानबोध" तथा कृष्णगढ़ के राजा नागरीदास जी रचित "पद्प्रसङ्गमाला"ग्रन्थों में भी बहुत से महात्माओं का नाम मुझे मिला, जिनकी एक एक सूची इस उपक्रमणिका के अंत में लगा दी गई है। आशा है कि यह इतिहास-तत्वानुसन्धान-कारियों का विशेष सहायकारिणी होगी।

"चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता,, तथा "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता" भी इस विषय में विशेष सहायक हैं, परन्तु ये दोनो ही ग्रन्थ छप गए हैं तथा बहुत प्रसिद्ध हैं, अतएव इनका विशेष वर्णन नहीं किया गया।

इस ग्रन्थ की टिप्पणी लिखने में मुझे निम्नलिखित ग्रन्थों से बहुत कुछ सहायता मिली है, अतएव उनके कर्ताओं को हृदय से धन्यवाद देता हूं-

(१) नाभाजी कृत "भक्तमाल"--(खेद का विषय है कि मुझे कोई शुद्ध प्रति इसकी नहीं मिली इससे नामों के पता लगाने में बहुत कुछ कठिनता पड़ी) ।

(२) प्रियादास जी कृत "भक्तमाल" पर कवित्तमय "भक्ति-रस बोधिनी" टीका ।

(३) राजा प्रतापसिंह (पड़रौनावाले) कृत "भक्तकल्पद्रुम" नामकी "भक्तमाल की गद्य टीका" ।

(४) भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र कृत "वैष्णवसर्वस्व"

(५) ,, ,, ,, ,, "रामानुज स्वामी का जीवनचरित्र" ।

(६) ,, ,, ,, ,, "जयदेव जी का जीवन चरित्र" ।

(७) प्राचीन पदों का संग्रह (हस्त लिखित)

(८) श्री स्वामी हरिदास जी के सम्प्रदाय की बाणी (,,)

(९) श्री भगवतरसिक जी की बाणी (,,)

(१०) व्यास जी की बाणी (,,)

(११) मलूकदास जी रचित "ज्ञानबोध" (,,)

(१२) बाबू अक्षयकुमार दत्त रचित "भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय" (बँगला) ।

(१३) मीराबाई का जीवनचरित्र–मुंशी देवीप्रसाद कृत ।

(१४) ,, ,, ,, ,, बाबू कार्तिकप्रसाद कृत ।

(१५) श्रीमान् डाक्तर ग्रिअर्सन कृत-The Modern Vernacular literature of Hindustan.

(१६) मिस्टर ग्राउस कृत–Mathura District Memoir.

(१७) कैटेलोगस कैटेलोगोरम–Catalogus Catalogorum

(१८) "शिवसिंहसरोज" ।

(१९) पण्डित राधाकृष्ण रासधारी कृत "रास सर्वस्व" ।

(२०) "श्रीनाथ जी की प्राकट्यवार्ता"–पण्डित मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या सम्पादित ।

(२१) "चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता"
(२२) "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता"।
(२३) श्री वल्लभकुल कल्पवृक्ष।

अन्त में सब सज्जनों से यह निवेदन है कि यह ग्रन्थ बहुत थोड़े समय में और बहुत संक्षेप से लिखा गया है, अतएव इसमें जो कुछ भ्रम हों उन्हें क्षमा करेंगे और इसमें वर्णित महात्माओं के विषय में जो कुछ विशेष किसी महाशय को विदित हो तो वे कृपाकर सूचित करें जिसमें दूसरे संस्करण में सन्निवेशित कर दिया जाय।

सम्पादक

श्रीहरिः

अथ भक्तनामावली

दोहा

हरिवंश नाम ध्रुव कहत ही बाढ़ै आनंद बेलि ॥
प्रेम रंगी उर जगमगै नवल जुगल वर केलि ॥ १ ॥
निगम ब्रह्म परसत नहीं सो रस सब तें दूरि ॥
कियो प्रगट हरिवंश जी रसिकनि जीवनि मूरि ॥ २ ॥
ग्रन चंद चरन अंबुज भजहिं मन क्रम बचन प्रतीति ॥
वृन्दाबन निज प्रेम की तब पावै रस रीति ॥ ३ ॥
कृष्णचन्द्र के कहत ही मन को भ्रम मिटि जाइ ॥
विमल भजन सुखसिन्धु में रहै चित्त ठहराइ ॥ ४ ॥
श्री गोपिनाथ पद उर धरै महा गोप्य रससार ॥
बिनु विलम्ब आवै हियै अद्भुत जुगल बिहार ॥ ५ ॥
पति कुटुम्ब देखत सबै घूंघट पट दिय डारि ॥
देह गेह बिसर्यो तिन्हैं मोहन रूप निहारि ॥ ६ ॥
धीर गँभीर समुद्र सम सील सुभाउ अनूप ॥
सब अँग सुन्दर हंसत मुख सुन्दर सुखद सरूप ॥ ७ ॥
शुक नारद उद्धव जनक प्रहलादिक सनकादि ॥
ज्यौं हरि आपुन नित्य हैं त्यौं ये भक्त अनादि ॥ ८ ॥
प्रगट भयो जयदेव मुख अद्भुत गीतगुविन्द ॥
कह्यो महा सिङ्गार रस सहित प्रेम मकरन्द ॥ ९ ॥

पद्मावति जयदेव प्रेम बस कीने मोहन ॥
अ पदी जो कहै सुनत फिरै ताके गोहन ॥ १० ॥
श्रीधर स्वामी तौ मनौ श्रीधर प्रगटे आनि ॥
तिलक भागवत कियौ रचि सब तिलकनि परवानि ॥ ११ ॥
रसिक अनन्य हरिदास जू गायौ नित्य बिहार ॥
सेवा हू में दूर किय विधि निषेध जञ्जार ॥ १२ ॥
सघन निकुञ्ज न रहत दिन बाढ़्यो अधिक सनेह ॥
एक बिहारी हेत लगि छांड़ि दिए सुख देह ॥ १३ ॥
रङ्क, छत्रपति काहु की धरी न मन परवाह ॥
रहे भींजि रस प्रेम में लीने कर करवाह ॥ १४ ॥
बल्लभ सुत विट्ठल भए अति प्रसिद्ध संसार ॥
सेवा विधि जिंह सबै को कीनी तिन व्योहार ॥ १५ ॥
राग भोग अद्भुत विविधि जो चहिए जिहिकाल ॥
दिनहिं लड़ाए हेत सों गिरिधर श्री गोपाल ॥ १६ ॥
गौड देस सब उद्धरयौ प्रगटे कृष्ण चैतन्य ॥
तैसेहि नित्यानन्द हू रसमय भए अनन्य ॥ १७ ॥
पावत हीं तिनकौ दरस उपजै भजनानन्द ॥
बिनहीं स्रम छुटि जाहिं सब जे माया के फन्द ॥ १८ ॥
रूप सनातन मन बढ़्यो राधाकृष्णऽनुराग ॥
जानि विस्व नस्वर सबै तब उपज्यो वैराग ॥ १९ ॥
विष समान तजि विषय सुख देस सहित परिवार ॥
वृन्दाबन कों चले यों ज्यों सावन जलधार ॥ २० ॥
तृन तें नीचौ आपकौं जानि बसे बन मांहि ॥
मोह छांड़ि ऐसे रहे मनौं चिन्हारिहु नाहिं ॥ २१ ॥
रघुनन्दन सारङ्ग जी जीवति पाछें आए ॥
कृष्ण कृपा करि सबै आनि निज धाम बसाए ॥ २२ ॥

भजनरासि रघुनाथ जी राधाकुण्ड स्थान ।।
लोन तक्र ब्रज को लयौ परस्यो नहिं कछु आन ।। २३ ।।
बन्दन करि कै चिन्तवन गौर स्याम अभिराम ।।
सोवत हूं रसना रटै राधाकृष्ण सुनाम ।। २४ ।।
श्रीविलास ब्रजनाथ अरु श्री चन्द मुकुन्द प्रवीन ।।
मदनमोहन पद कमल सों अधिक प्रीति जिन कीन ॥ २५ ॥
महापुरुष नन्दा भए करि तन सकल सिँगार ॥
सखी रूप चिन्तत फिरैं गौर स्याम सुंकुवार ॥ २६ ॥
नैन सजल तिहि रङ्ग मैं चित पायो विस्राम ॥
बिबस बेगि ह्वै जात सुनि लाल लाड़िली नाम ॥ २७ ॥
कृष्णदास हुते जङ्गली तेऊ तैसी भांति ॥
तिनके उर झलकत रहै हेम नील मनि कांति ॥ २८ ॥
जुगल प्रेम रस अब्धि मैं परयो प्रबोध मन जाइ ॥
वृन्दावन रस माधुरी गाई अधिक लड़ाइ ।। २९ ॥
अति विरक्त संसार तें बसे विपिन तजि भौन ॥
प्रीति सहित गोपाल भट सेये राधारौन ॥ ३० ॥
घमँडी रस मैं घमँड़ रह्यौ वृन्दावन निज धाम ॥
बंसीबट तट रास कै सेये स्यामा स्याम ॥ ३१ ॥
भट्टनरायन अति सरस ब्रज मण्डल सों हेत ॥
ठौर ठौर रचना करी प्रगट कियो संकेत ॥ ३२ ॥
बर्द्धमान श्रीभट्ट अरु गङ्गल ब्रज वृन्दाबन आयौ ॥
करि प्रतीति सर्वोपरि जान्यो तातें चित्त लगायौ ॥ ३३ ।।
भट्ट गदाधर नाथभट विद्या भजन प्रवीन ॥
सरस कथा बानी मधुर सुनि रुचि होत नवीन ॥ ३४ ॥
गोविंदस्वामी गङ्ग अरु विष्णुविचित्र बनाइ ॥
पिय प्यारी को जस कह्यौ राग रङ्ग सों गाइ ॥ ३५ ॥

मनमोहन सेवा अधिक कीनी है रघुनाथ ॥
न्यारियै रस के भजन की बात परी तिहि हाथ ॥ ३६ ॥
गिरिधरस्वामी पर कृपा बहुत भई दई कुञ्ज ॥
रसिक रसिकनी कौ सुजस गायौ तिहि रस पुञ्ज ॥ ३७ ॥
बीठल-विपुल-बिनोद रस गाई अद्भुत केलि ॥
बिलसत लाड़िलि लाल सुख अंसनि पर भुज मेलि ॥ ३८ ॥
बिहारिदास निज एक रस जो स्वामी की रीति ॥
निरबाही पाछें भली तोरि सबनि सों प्रीति ॥ ३९ ॥
मत्त भयौ रस रङ्ग में करी न दूजी बात ॥
विनु बिहार निज एक रस और न कछू सुहात ॥ ४० ॥
वर किशोर दोउ लाड़िले नवल प्रिया नव पीय ॥
प्रगट देखियत जगत में रसिक व्यास के हीय ॥ ४१ ॥
कहनी करनी करि गयौ एक व्यास इहि काल ॥
लोक वेद तजिकै भजे श्री राधावल्लभलाल ॥ ४२ ॥
प्रेम मगन नहिं गन्यौ कछु वरनावरन विचार ॥
सबनि मध्य पायो प्रगट लै प्रसाद रस सार ॥ ४३ ॥
सेवक की सरि को करै भजन सरोवर हंस ॥
मन बच कै धरि एक व्रत गाए श्री हरिवंस ॥ ४४ ॥
वंस विना हरिनाम हूं लियौ न जाके टेक ॥
पावै सोई वस्तु कों जाके है व्रत एक ॥ ४५ ॥
कहा कहौं कहि नहिं सकौं नरवाहन को भाग ॥
श्री मुख जाको नाम धरयो निज बानी अनुराग ॥ ४६ ॥
अति अनन्य निज धर्म में नाइक रसिक मुकुन्द ॥
बसे बिपिन रस भजन कै छांड़ि जगत दुख दुन्द ॥ ४७ ॥
परम भागवत अति भए भजन मांहि दृढ़ धीर ॥
चतुर्भुज वैष्णवदास की बानी अति गम्भीर ॥ ४८ ॥

सकल देस पावन कियौ भगवत जसहिं बढ़ाइ ॥
जहां तहां निज एक रस गाई भक्ति लड़ाइ ॥ ४९ ॥
परमानन्द किसोर दोउ सन्त मनोहर खेम ॥
निर्वाह्यौ नीके सबनि सुन्दर भजन को नेम ॥ ५० ॥
छांड़ि मोह अभिमान सब भक्तनि सों अति दीन ॥
वृन्दावन बसिकै तिनहिं फिरि मन अनत न कीन ॥ ५१ ॥
लालदास स्वामी सरस जाकै भजन अनूप ॥
बरन्यौ अति दृढ़ अच्छरनि लाल लाड़िली रूप॥ ५२ ॥
अधिक प्यार है भजन सों और न कछू सुहात ॥
कहत सुनत भगवत जसहिं निसि दिन जाहि बिहात ॥ ५३ ॥
वालकृष्ण गति कह कहों कैसेहु कहत बनै न ॥
रूप लाड़िली लाल कौ झलमलात तिहि नैन ॥ ५४ ॥
अति प्रवीन पण्डित अधिक लेस गर्ब को नांहि ॥
कीनो सेवा मानसी निसि दिन मन तिहि मांहि ॥ ५५ ॥
ज्ञानू नाहरमल्ल की देखी अद्भुत रीति ॥
हरिवंसचन्द पद कमल सों बाढ़ी दिन दिन प्रीति ॥ ५६ ॥
कह कहों मोहनदास रति ताकी गति भई आन ॥
व्यासनन्द अन्तर सुनत तजे तिही छिन प्रान ॥ ५७ ॥
बिठलदास मुरलीधरन चरन सेये सब काल ॥
तैसेहि दास गुपाल हूं गाए ललना लाल ॥ ५८ ॥
सुन्दर मन्दिर की टहल कीनी अति रुचि मानि ॥
सफल करी संपति सकल लगी ठिकाने आनि ॥ ५९ ॥
अङ्गीकृत ताकौं कियौ परम रसिक सिरमौर ॥
करुनानिधि बहु कृपा करि दीनी सनमुख ठौर ॥ ६० ॥
बड़ो उपासिक गौरिया नाम गुसांईदास ॥
एक चरन बन चन्द बिनु जाकें और न आस ॥ ६१ ॥

नेहु। नागरिदास अति जानत नेह कि रीति ॥
दिन दुलराई लाड़िली लाल रँगीली प्रीति ॥ ६२ ॥
व्यासनन्द पद सों अधिक जाकें दृढ़ विस्वास ॥
जिहि प्रताप यह रस लह्यो अरु वृन्दाबन बास ॥ ६३ ॥
भली भांति सेयो विपिन तजि बन्धुनि सों हेत ॥
सूर भजन में एक रस छाड़्यो नाहिन खेत ॥ ६४ ॥
बिहारिदास, दम्पति, जुगल, माधौ, परमानन्द ॥
वृन्दावन नीके रहे काटि जगत को फन्द ॥ ६५ ॥
नीकी भांति मुकुन्द की कैसेहुं कहत बनैन ॥
बात लाडिली लाल की सुनि भरि आवत नैन ॥ ६६ ॥
मन बच करि विस्वास धरि मारि हिये के काम ॥
मातु पिता तिय छांड़ि के बस्यो वृन्दाबन धाम ॥ ६७ ॥
अंतकाल गति कह कहौं कैसेहु कही न जाति ॥
चतुरदास वृन्दाबिपिन पायो आछी भांति ॥ ६८ ॥
चिन्तामनि बातनि सरस सेवा मांहि प्रवीन ॥
कहत विविधि भगवत जसहिं छिन छिन उपज नवीन ॥ ७९ ॥
नागर अरु हरिदास मिलि सेये नित हरिदास ॥
वृन्दाबन पायो दुहुनि पूजी मन की आस ॥ ७० ॥
नवल, कल्यानी सखिनि के मन हो अति अनुराग ॥
लाल लड़ैती कुंवरि कौ गायौ भाग सुहाग ॥ ७१ ॥
भली भांति वृन्दाअली अति कोमल सुसुभाउ ॥
कृपा लड़ैती कुंवरि की उपज्यो अद्भुत भाउ ॥ ७२ ॥
कीनो रास बिलास बहु सुख बरसत सङ्केत ॥
रचना रची कल्यान रुचि मण्डनिदास समेत ॥ ७३ ॥
सेवा राधारमन की भक्तनि के सनमान ॥
तातें बास जमुना कियो तिहि सम नाहिं कोउ आन ॥ ७४ ॥

छुते उपासक अधिक हैं या रस मैं हरिदास ॥
निसि दिन बाँधे भजन मैं राधाकुण्ड निवास ॥ ७५ ॥
बरसाने गिरिधर सुहृद जाकैं ऐसा हेत ॥
भाजन हू भक्तनि विना धरयो रहै नहिं लेत ॥ ७६ ॥
नन्ददास जो कछु कह्यो राग रङ्ग मैं पागि ॥
अच्छर सरस सनेह मय सुनत स्रवन उठ जागि ॥ ७७ ॥
रमादसा अद्भुत हुते करत कवित्त सुढार ॥
बात प्रेम की सुनत ही छुटत नैन जलधार ॥ ७८ ॥
बावरो सा रस मैं फिरै खोजत नेह कि बात ॥
आछे रस के बचन सुनि बेग बिबस ह्वै जात ॥ ७९ ॥
कह कहा मृदुल सुभाउ अति सरस नागरी दास ॥
बिहारी बिहारीनि का सुजस गाया हरखि हुलास ॥ ८० ॥
परमानंद म भैा मुदित नव किसोर कल केलि ॥
कहा रसाला भांति सैां तिहि रस मैं रहे झेलि ॥ ८१ ॥
सेयैा नीका भांति सां श्री सङ्केत स्थान ॥
रहयो बडाई छांड़ि कै सूरज द्विज कल्यान ॥ ८२ ॥
खरगसेन के प्रेम की बात कही नहिं जात ॥
लिखत ललित लीला करत गए प्रान तजि गात ॥ ८६ ॥
ऐसेहिं राधैदास की सुनी बात यह कान ॥
गावत करत धमारि हरि छुटि गए तब प्रान ॥ ८४ ॥
अहिबरन भक्त अद्भुत भयैा और न कछ सुहात ॥
अङ्गनि की छबि माधुरी चिन्तत जाहि बिहात ॥ ८५ ॥
रोमाञ्चित तन पुलक ह्वैं नैन रहे जल पूरि ॥
जाकैं आसा एकहा वृन्दाबन की धूरि ॥ ८६ ॥
कह कहौं महिमा भाग की भई कृपा सब अङ्ग ॥
वृन्दाबनदासी गयो जाइ सखिनि कै सङ्ग ॥ ८७ ॥

लाज छांड़ि गिरिधर भजी करी न कछु कुल कानि ॥
सोई मीरा जग विदित प्रगट भक्ति की खानि ॥ ८८ ॥
ललिता हू लइ बोलि कै तासों हो अति हेत ॥
आनंद सों निरखत फिरै बृन्दाबन रस खेत ॥ ८९ ॥
नृत्यत नूपुर बांधि कै नाचत लै करतार ॥
विमल हियै भक्तनि मिली तृन सम गन्यो संसार ॥ ९० ॥
बन्धुनि विष ताकों दियै करि विचार चित आन ॥
सो विष फिरि अमृत भयै तब लागे पछितान ॥ ९१ ॥
गङ्गा, जमुना तियनि मैं परम भागवत जानि ॥
तिनकी बानी सुनत ही बढ़ै भक्ति उर आनि ॥ ९२ ॥
कुम्भन, कृष्ण (दास) गिरिधर (न) सों कीनी सांची प्रीति ॥
कर्म धर्म पथ छांड़ि कै गाई निज रस रीति ॥ ९३ ॥
पूरनमल, जसवंतजी, भोपति, गोविंददास ॥
हरीदास इनि सबनि मिलि सेये नित हरिदास ॥ ९४ ॥
परमानंद अरु सूर मिलि गाई सब ब्रज रीति ॥
भूलि जात बिधि भजन की सुनि गोपिन की प्रीति ॥ ९५ ॥
माधैा, रामदास बरसानियां ब्रज बिहार के खेल ॥
॥ ९६ ॥
गाए नीकी भांति सों कवित रीति भल कीन ॥
मदनमोहन अपनाइ कै अङ्गीकृत करि लीन ॥ ९७ ॥
जिनि जिनि भक्तनि प्रीति की ताके बस भए आनि ॥
सैन होइ नृप टहल किय नामदेव छाई छानि ॥ ९८ ॥
जगत विदित पीपा, धना अरु रैदास, कबीर ॥
महाधीर दृढ़ एक रस भरे भक्ति गम्भीर ॥ ९९ ॥
जगन्नाथ वत्सल भगत कीनो जस विस्तार ॥
माधोहिं भूखो जानि कै ल्याए भोजन थार ॥ १०० ॥

एक समै निसि सीत सों कांपन लाग्यो गात ॥
आनि उढ़ाई तिहि समै अपने कर सकलात ॥ १०१ ॥
बिल्वमंगल जब अन्ध भयो आपुन कर गह्यो आइ ॥
भक्तनि पाछें फिरत यों ज्यों बच्छा संग गाइ ॥ १०२ ॥
रामानंद, अङ्गद, सोभू, हरिव्यास, अरु छीत ॥
एक एक के नाम तें सब जग होइ पुनीत ॥ १०३ ॥
रांका बांका भक्त ह्वै महा भजन रसलीन ॥
इन्द्रासन के सुखनि कैां मानत तृन तें हीन ॥ १०४ ॥
नरसी हो अति सरस हिय कहा देउं समतूल ॥
कह्यौ सरस सिङ्गार रस जानि सुखनि कैा मूल ॥ १०५ ॥
दीनी ताकों रीझि कै माला नन्द कुमार ॥
राखि लियो अपनी सरन विमुखनि मुख दै छार ॥ १०६ ॥
जहं जहं भक्तनि को कछू परत है सङ्कट आनि ॥
तहं तहं आपन बीचि ह्वै धरत अभय को पानि ॥ १०७ ॥
भक्त नरायन भक्त सब धरे हिये दृढ़ प्रीति ॥
बरने आछी भांति सों जैसी जाकी रीति ॥ १०८ ॥
रसिक भक्त भूतल घने लघुमति क्यों कहि जांहि ॥
बुधि प्रमान गाए कछू जे आए उर मांहि ॥ १०९ ॥
हरि को निज जस सों अधिक भक्तनि जस पर प्यार ॥
यातें यह माला रची करि ध्रुव कंठ सिंगार ॥ ११० ॥
भक्तनि की नामावली जो सुनि हैं चित लाइ ॥
ताकैं भक्ति बढ़ै घनी अरु हरि होंइ सहाइ ॥ १११ ॥
एकबार जिहि नाम लियो हित सों ह्वै अति दीन ॥
ताको अङ्ग न छाड़िई ध्रुव अपनो करि लीन ॥ ११२ ॥
ऐसे प्रभु जिन नहिं भजे सोई अति मति हीन ॥
देखि समुझि या जगत में बुरो आपुनो कीन ॥ ११३ ॥

अजहूं सोच बिचारि कै गहि भक्तिन पद ओट ॥
हरि कृपालु सब पाछिली छमि हैं तेरी खोट ॥ ११४ ॥

इति श्री भक्तनामावली सम्पूर्णम् ।

शुभम्

भक्तनामावली में वर्णित महात्माओं का

संक्षिप्त ऐतिहासिक वृत्तान्त

(१)

गोस्वामि श्री हित हरिवंश जी

दोहा १—ग्रन्थकर्ता ध्रुवदास जी श्री हित हरिवंश जी के शिष्य थे, इसलिये सबसे पहिले उन्होंने इन्हींकी बन्दना की है। हरिवंश जी का पूर्व स्थान देवनगर इलाक़ा सरकार सहारनपुर था। ये गौड़ ब्राह्मण थे। इनके पिता सुप्रसिद्ध व्यास स्वामि थे, जिनका उपनाम हरिराम शुक्ल था माता का नाम तारावती था। इनका जन्म मिती वैशाख बदी ११ संबत १५५९ को और प्रथम विवाह देवनगर में रुक्मिणी नाम्नी स्त्री से हुआ था, जिनसे दो पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई। इन सभों के विवाह करने के उपरान्त श्री वृन्दाबन बास की इच्छा से ये घर से चले। मार्ग में होड़ल के पास चरथावल ग्राम में एक ब्राह्मण मिले जिन्होंने अपनी दो कन्याएं और एक श्री राधावल्लभ जी ठाकुर की मूर्ति इनके अर्पण की। इनको लेकर ये श्री वृन्दावन आए। यहां मिती कार्तिक शुक्ल १३ संबत १५८२ को श्री राधारमण जी की मूर्ति स्थापित की, और माध्व सम्प्रदायान्तर्गत श्री राधावल्लभीय सम्प्रदाय चलाया। इनके शिष्यों में बहुत से अच्छे अच्छे कवि हुए हैं। इनके सम्प्रदाय वाले अपने नाम के साथ हित लिखते हैं, जैसे हित ध्रुव, हित दामोदर, हित हठी आदि। प्रोफ़ेसर विल्सन को श्री राधावल्लभ जी के प्राचीन मन्दिर में एक लेख संबत १६४१ का मिला। अब वह प्राचीन मन्दिर भग्नावस्था में पड़ा है। इनकी पहिली स्त्री का वंश देवनन्दन में है और पिछली दोनो स्त्रियों का वंश श्री वृन्दाबन में। इन्हों ने संस्कृत में "श्री राधासुधानिधि" नामक ग्रन्थ बनाया है जिसमें १७० श्लोक हैं। Catalogus

Catalogorum के अनुसार इनका बनाया " कर्मानन्द काव्य ' नामक एक संस्कृत ग्रन्थ और भी है भाषा में इनके चौरासी पद प्रसिद्ध हैं। परन्तु हमने इनकी इन चौरासी पदों के अतिरिक्त भी कुछ स्फुट कविता देखी है। इनकी शिष्य परम्परा में नरवाहन, नाहरमल्ल, बिट्ठलदास, मोहन दास, छबील दास, नवल दास, बलीदास, परमानन्दरसिक, हठी, हरिदास, खड्गसेन, गङ्गा और यमना आदि प्रसिद्ध हुए हैं।

(२)

श्री शुकदेव जी

दोहा ८—इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। इन्होंने श्रीमद्भागवत के उपदेश से महाराज परीक्षित का उद्धार किया था।

(३)

देवर्षि नारद जी

दोहा ८—इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। लोकोपकार के निमित्त सदा बीणानाद करते हुए सब लोक में घूमना इनका व्रत था।

(४)

श्री उद्धव जी

दोहा ८—ये भगवान श्री कृष्णचन्द्र के सखा थे। पुराणों में इनका चरित्र प्रसिद्ध है। ये यादव क्षत्रिय थे। इन्हींको ब्रज गोपिकाओं को उपदेश करने के लिये भगवान ने ब्रज में भेजा था।

(५)

राजर्षि श्री जनक जी

दोहा ८—ये क्षत्रिय राजा मिथिलादेश के थे। इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। भगवद्भक्ति में ये ऐसे मग्न थे कि देहानुसन्धान रहित हो जाते थे; इसीसे इनका नाम विदेह हो गया था।

(६)

परम भागवत प्रह्लाद जी

दोहा ८—इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। इन्हीके उद्धार के हेतु श्री नृसिंहावतार हुआ था।

(७)

सनकादिक

दोहा ८—सनक, सनन्दन, सनत्कुमार इन चारो भाइयों की कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। इन्हीके शाप से विष्णु पार्षद जय विजय को तीन जन्म तक क्रमशः हिरण्याक्ष-हिरण्यकश्यप, रावण-कुम्भकर्ण और दन्तवक्र-शिशुपाल का राक्षस जन्म लेना पड़ा था।

(८)

महाकवि जयदेव

दोहा ९—इनकी रचित "गीतगोविन्द" संसार में प्रसिद्ध है। ऐसा कौन सहृदय होगा जो श्री जयदेव जी के गीतगोविन्द को सुनकर मोहित न हो जाता हो। इन का जन्म बङ्गाल देश के वीरभूमि ज़िले से प्रायः दस कोस दक्षिण की ओर अजय-नद के उत्तर किन्दुबिल्व गांव में हुआ था। इनके पिता का नाम भोजदेव और माता का रामादेवी था, तथा स्त्री का नाम पद्मावती था। इनका समय बहुत वाद विवाद से सन् १०२५ ई० से १०५० ई० तक निर्णय किया गया है। भाषा में इनका जीवन चरित्र पूज्य भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी ने लिखा है। ये परम विरक्त और भगवद्भक्त थे। Catalogus Catalogorum में इनका बनाया एक "रामगीतगोविन्द" भी लिखा है, परन्तु (?) सन्देह का चिन्ह भी दिया है।

(९)

श्रीधर स्वामी

दोहा ११—ये श्री रामानुज सम्प्रदाय के थे। इन्होंने श्रीमद्भागवत पर टीका की है। वह टीका सर्वमान्य और अत्यंत प्रसिद्ध है। Catalogus Catalogorum के अनुसार इनके गुरू का नाम परमानन्द था और इन्होंने निम्नलिखित टीकाएं तथा ग्रन्थ बनाए थे :—

१ भगवद्गीता टीकासुबोधिनी २ भगवद्गीतासार टीका ३भागवतपुराण टीका ४ विष्णुपुराण टीका आत्मप्रकाश ५ वेदस्तुति टीका ५ ब्रजबिहार भावार्थदीपिका ७ पदार्थप्रकाशिका पुराणटीका (?)

(१०)

श्री स्वामी हरिदास जी

दोहा १२—"भक्तसिन्धु" ग्रन्थ के आधार पर मिस्टर ग्राउस ने इनका वृत्तांत यों लिखा है कि कोल के पास एक गांव में, जिसको अब हरिदासपुर कहते हैं, एक सनाढ्य ब्राह्मण ब्रह्मधीर नाम के रहते थे; उनके पुत्र ज्ञानधीर थे, जिनके इष्ट श्री गोबर्धन पर विराजमान श्री गिरिधारी जी थे। इनका बिवाह मथुरा में हुआ, और एक पुत्र आशधीर हुए। आशधीर जी का बिवाह श्री वृन्दाबन के निकटस्थ राजपुर गांव के रहनेवाले गङ्गाधर की पुत्री से हुआ। इन्हींके गर्भ से मिती भादों बदी* ८ संबत १४४१ को हरिदास जी का जन्म हुआ। हरिदास जी बचपन ही से भगवत् भक्ति में लीन थे। २५ बर्ष की अवस्था में गृहत्यागी होकर श्री वृन्दाबन में मानसरोवर पर जा बसे। थोड़े दिन पीछे निधुबन में रहने लगे। निधुबन ही में पहिले पहिल इनके अपने मामा श्री बिट्ठलविपुल जी इनके शिष्य हुए। इसी निधुबन में ही इन्हें श्री बांकेबिहारी जी की मूर्ति भी मिली जिनका बहुत भारी

---

* सम्भवतः भादों सुदी ८, क्योंकि उसी दिन श्री वृन्दाबन में गोपीदास जी की टट्टी में इनका जन्मोत्सव महा समारोह के साथ मनाया जाता है। "रास सर्वस्व" ग्रन्थ में राधाकृष्ण जी ने इनका जन्म मि० भादो सुदी ८ सं० १४८१ को लिखा है।

मन्दिर अब तक श्री वृन्दाबन में है और जिनके अधिकारी उक्त स्वामी जी के भाई जगन्नाथ के बंशधर गोसाईं लोग हैं। श्री हरिदास स्वामी परम विरक्त थे, सदैव भगवान के ध्यान में मग्न रहते थे। एक दिन एक शिष्य ने एक पारस पत्थर भेट किया, आपने उसे श्री जमुनाजी में फेक दिया; उसे क्षोभ हुआ तो आपने पारस का ढेर उसे दिखला दिया। एक शिष्य ने एक सहस्र के मूल्य के इत्र की शीशी भेट की, स्वामी ने उसे बालू में ढरका दी; शिष्य दुखित चित्त जब बिहारीजी के दर्शन को गया तो मूर्ति को उसी इत्र से भीगी हुई देखा। सुप्रसिद्ध गवैये तानसेन जी गान विद्या में इन्हींके शिष्य थे। एक समय अकबर ने चाहा कि स्वामी जी का गाना सुनें, परन्तु यह कठिन था, तब तानसेन बादशाह* के हाथ सेवक के रूप में तानपूरा लिवाकर गया। स्वामी जी अपने प्राचीन शिष्य को देख प्रसन्न हुए। तानसेन ने कुछ गाया, पर जानकर चूक की, तब स्वामी ने स्वयं गाकर बताया। बादशाह मोहित हो स्वामी के चरणों में गिरा और उसी समय मोरों और बन्दरों के खाने के निमित्त उसने कुछ जागीर बांध दी। हरिदास स्वामी की मृत्यु का संबत १५३७ लिखा है। परन्तु इसमें भ्रम है। एक तो स्वामी जी के वंशधर लोग कहते हैं कि सनाढ्य नहीं सारस्वत थे, कोल नहीं मुलतान के निकटस्थ उच्च गांव के थे और चार सैा वर्ष नहीं तीन सैा बर्ष पहिले इनका समय था। जो कुछ हो, इनका समय सम्वत १६०० के लगभग का निश्चय है। प्रोफ़ेसर विलसन इनको चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदायान्तर्गत लिखते हैं; परन्तु यह उनका भ्रम है, इनसे चैतन्य महाप्रभु से कोई सम्बन्ध नहीं है। इनके बनाए केवल दो छोटे छोटे पदों के ग्रन्थ हैं—एक साधारण सिद्धांत और दूसरा रस के पद। अपनी कविता में ये अपना इतना बड़ा छाप रखते थे—"श्री हरिदास के स्वामी श्यामा कुञ्ज बिहारी"। इनके पद गवैयों के अतिरिक्त किसी दूसरे को गाना कठिन है। इनकी शिष्य परम्परा यों है—स्वामी हरिदास, विट्ठल-विपुल, विहारिनिदास, नागरीदास, सरसदास, नवलदास, नरहरदास, रसिकदास, ललितकिशोरी और मैानीदास जी—

* यह चित्र अब तक श्री वृन्दाबन में वर्तमान है।

ये सभी प्रायः सुकवि थे। इनके तीन स्थान श्री वृन्दावन में पूज्य हैं। १–श्री बांकेबिहारीजी का मन्दिर, २ निधुवन, ३ मानीदास जी की टट्टी ॥

(११)

श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु

दोहा १५–श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु तैलङ्ग ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम लक्ष्मण भट्ट और माता का इल्लमगारू था। इनका जन्म सम्वत् १५३५ मिती वैशाख बदी ११ को चम्पारन-सारन के पास चैारा गांव में हुआ। जब कि इनके माता पिता काशी आ रहे थे। काशी में ५ वर्ष की अवस्था में इन्होंने सुप्रसिद्ध माध्वाचार्य जी से विद्याध्ययन किया। इनके दो भाई और थे–बड़े रामकृष्ण और छोटे रामचन्द्र। ये दोनो ही संस्कृत के बड़े कवि थे। सम्वत् १५४८ में १३ वर्ष की अवस्था में इन्होंने विजयनगर के राजा कृष्णदेव की सभा में शाङ्कर मतवालों को शास्त्रार्थ में जीता। उस समय बिष्णुस्वामी की गद्दी खाली थी, सब महन्त आचार्यों ने इन्हें उस गद्दी पर बैठाया और वल्लभाचार्य इनका नाम हुआ। डाक्तर ग्रिअर्सन अनुमान करते हैं कि यह कृष्णदेव सम्भवतः कृष्ण रायलू हैं जो सन् १५२० ई० में राज्य करते थे। इस दिग्विजय के पीछे ये फिर काशी आए और यहां के पण्डितों को शास्त्रार्थ में जीता। फिर ब्रज गए और वहां श्री गोबर्द्धन की कन्दरा में जो श्री गिरिधर जी जिन्हें देवदमन भी कहते हैं (जिनका नाम अब श्रीनाथ प्रसिद्ध है) की मूर्ति बिराजती थी, उन्हें पधराकर* सेवा की वात्सल्य भाव से एक नवीन ही प्रणाली निकाली। औरङ्गज़ेब के उपद्रव से ये इस मूर्त्ति को मेवाड़ में उठा ले गए वहां श्रीनाथ जी का बड़ा भारी वैभव है और लाखों रुपया वार्षिक भोगराग में व्यय होता है। इसके

---

* श्री गिरिराज पर जो श्रीनाथ जी का मन्दिर है उसकी नेव बैशाख सुदी ३, सम्वत् १५५६ को पड़ी। पूर्णमल्ल खत्री अम्बाले वाले ने यह मन्दिर बनवाया और सम्वत् १५७६ में श्रीनाथ जी इसमें बिराजे।

पीछे इन्होंने तीन बार भारत-भ्रमण किया (जिसको ग्रंथों में पृथ्वी परिक्रमा कहते हैं) और निज मत का प्रचार किया। भारतवर्ष के प्रायः सभी तीर्थों और देवस्थानों में इनकी बैठक हैं। जहां जहां इन्होंने बैठकर एक सप्ताह में श्रीमद्भागवत का सम्पूर्ण पारायण किया है, वहीं वहीं बैठक स्थापित हुई हैं। ऐसी ८४ बैठकें हैं। इन्होंने संस्कृत में छोटे बड़े बहुत से ग्रन्थ बनाए हैं। श्री मद्भागवत पर सुबोधिनी नाम्नी टीका, ब्रम्हसूत्र पर अणुभाष्य नामका भाष्य और जैमिनीय सूत्र पर भाष्य बनाया है। Catalogus Catalogorum के अनुसार ५२ ग्रन्थ इनके बनाए हैं, इनके मुख्य सेवक (शिष्य) ८४ थे जिनका वृत्तांत इनके पौत्र श्री गोस्वामी गोकुलनाथ जी ने "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" नामक ग्रन्थ में दिया है। इनमें से बहुतेरे हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे। सूरदास, परमानन्ददास, कृष्णदास और कुम्भनदास तो ऐसे प्रसिद्ध हुए कि अष्ट * छाप में गिने गए। इनकी स्त्री का नाम लक्ष्मी बहूजी था। इनके दो पुत्र थे, गोस्वामी गोपीनाथ जी, और गोस्वामी बिट्ठलनाथ जी। गोस्वामी गोपीनाथ जी का वंश नहीं चला। गोस्वामी बिट्ठलनाथ जी बहुत प्रसिद्ध हुए। इन्होंने मिती आषाढ़ बदी २ सम्वत् १५८७ को काशी में आकर हनुमान घाट पर शरीर छोड़ा। उस समय सन्यास ले लिया था, और सशरीर गङ्गा जी में अपने पुत्रों को उपदेश करते करते प्रवेश किया था। यहां पर इनकी बैठक अब तक विद्यमान है, और इसी महल्ले में प्रायः तैलङ्ग लोग आकर बसते हैं। श्री वल्लभाचार्य जी ने अन्त समय में साढ़े तीन श्लोकों में अपने पुत्रों को उपदेश दिया था।

यूरोपियन विद्वानों ने भ्रम से इन्हें राधावल्लभीय सम्प्रदाय-प्रवर्तक लिखा है। उसके प्रवर्तक हित हरिवंश जी थे। इनकी सम्प्रदाय गोकुलस्थ सम्प्रदाय कहलाती है, और यद्यपि ये भाषा कविता के बड़े उन्नायक थे परन्तु स्वयं भाषा के कवि नहीं थे। वल्लभ कवि दूसरे ही थे।

---

* अष्टछाप का विवरण गोस्वामी बिट्ठलनाथ जी के प्रसङ्ग में देखिए।

(१२)

गोस्वामि श्री विट्ठलनाथ जी

दोहा १५—ये श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के कनिष्ठ पुत्र थे। इनका जन्म मि० पौष शुक्ल ९ सं० १५७२ को चुनार में हुआ था। यह स्थान इस सम्प्रदाय में परम पूजनीय है इन्होंने संस्कृत में बहुतेरे ग्रन्थ बनाए हैं, Catalogus Catalogorum के अनुसार इनके रचित ४९ ग्रन्थ हैं। भाषा कविता इन्होंने स्वयं तो नहीं की है परन्तु उसका प्रोत्साहन बहुत कुछ किया है। इनके मुख्य शिष्य २५२ थे जिनका चरित्र इनके पुत्र गोस्वामी गोकुलनाथ जी ने "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में लिखा है। इनमें से बहुत से अच्छे कवि थे, जिनमें से चार अत्यन्त प्रसिद्ध थे-गोविन्द स्वामी, छीत स्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास। इन अपने चार कवि शिष्य और सूरदासादि ४ अपने पिता के शिष्यों को मिलाकर आठ कवियों को इन्होंने अष्टछाप की उपाधि दी जो अब तक परम मान्य है। श्री गोवर्द्धननाथ जी की सेवा की शैली और ठीक वात्सल्य भाव से सेवा करने की प्रणाली इन्होंने चलाई। आठ भोग और आठ दर्शन नियत किए। विना समय दर्शन किसी को नहीं मिल सकता। दर्शन के लिये आमेर (जयपुर) नरेश महाराज मानसिंह को भी घंटों ठहरना पड़ा था, और बहुत कुछ भेट की लालच देने पर भी विना समय के वे दर्शन नहीं पा सके थे। इस सम्प्रदाय में इनका मान्य स्वयं मतप्रवर्तक इनके पिता से कम नहीं है। इनके समय में श्रीनाथजी का वैभव बहुत कुछ बढ़ा, इनका मुख्य स्थान गोकुल होने के कारण इनकी सम्प्रदाय को लोग गोकुलस्थ सम्प्रदाय कहते हैं। इनके सात पुत्र हुए-श्री गिरिधर जी, श्री गोविन्द जी, श्री बालकृष्ण जी, श्री गोकुलनाथ जी, श्री रघुनाथ जी, श्री यदुनाथ जी और श्री घनश्याम जी। ये सातों ही पण्डित और भगवद्भक्त थे। सात मुख्य ठाकुर जी श्री वल्लभाचार्य जी के सेव्य थे, इन सातों के हिस्से एक एक आए और यह सात गद्दिएं स्थापित हुईं। श्री नवनीतप्रिय जी, श्री द्वारिकानाथ, श्री मथुरानाथ, श्री विट्ठलनाथ श्री गोकुलनाथ, श्री

गोकुलचन्द्रमा जी और श्री मदनमोहन जी, श्रीनाथ जी सब के ठाकुर रहे। अब भी इन एक एक स्थानों में पचास साठ हज़ार रुपया वार्षिक का व्यय है। इस समय इनमें से तीन गद्दी मेवाड़ राज्य में, एक कोटा राज्य में, दो कामबन ज़िला मथुरा में और एक गोकुल ज़िला मथुरा में है श्री गिरिधर जी के समय तक सेवा में सब लोग केवल संस्कृत बोलते थे। अब प्रायः व्रजभाषा बोलते हैं। विधर्मियों का नाम सेवा के समय नहीं लेते। ग़ाज़ीपुर को गुलाब का गांव, मिर्ज़ापुर को मिर्चेका गांव, मुसल्मानों को बड़ी जाति, कृस्तानों को टोपीवाले, आदि कहते हैं। इस सम्प्रदाय के जितने और जहां मन्दिर हैं, भीतरी बनावट प्रायः सभों की एक सी हैं और सेवा की प्रणाली तो सब की एक हई है। बिट्ठल कवि भ्रम वश लोग इन्हीं को समझते हैं, परन्तु यह भाषा के कवि नहीं थे। सं० १६४२ मिती माघ कृष्ण ७ को इन्होंने इस लोक को छोड़ा॥

---

(१३)

श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु

दोहा १७, १८—मिती फाल्गुन सु० १५ सम्बत् १५४२ (शाके १४०७) को सन्ध्या समय बङ्गदेश के नवद्वीप नगर में इनका जन्म हुआ। उस दिन चन्द्रग्रहण था। पिता का नाम जगन्नाथ मिश्र और माता का शचीदेवी था। इनका पूर्व नाम विश्वम्भर था। विद्या में ये केशवपुरी के शिष्य थे, और दीक्षा गुरु इनके माधवेन्द्र थे। बालकाल में ये बड़े ही उपद्रवी थे, इनके मातापिता को सदा उलहना मिला करता था। बाल्यावस्था ही में इनको पितृवियोग हो गया था और बड़े भाई विश्वरूप पहिले ही से सन्यासी हो गए थे, इससे इन्हें कुछ दिनों तक गृहस्थाश्रम में रहना पड़ा था। इनका बिवाह लक्ष्मीदेवी से हुआ था। उस समय सारे बङ्गदेश में शाक्त धर्म का बड़ा प्रचार था। तन्त्र मन्त्र का बड़ा ज़ोर था। चैतन्यदेव के हृदय में बचपन ही से भगवद्भक्ति का अंकुर जम गया था। २४ वर्ष की अवस्था में गृहत्यागी हो, सारे देश में

इन्होंने भगवद्भक्ति का स्रोत बहा दिया। हरिनाम से सारे देश को पवित्र कर दिया। शेष जीवन अर्थात् २४ वर्ष तक यों ही देशदेशान्तर में भ्रमण कर और बङ्गदेश में वैष्णवता का प्रवाह बहाकर सम्वत् १५९० में ये परलोकगत हुए। इस २४ वर्ष में ६ वर्ष तक तो ये ब्रज, जगदीशपुरी आदि तीर्थस्थानों में भ्रमण करके निजमत प्रचार और उपयुक्त शिष्यमण्डली संघटन करते रहे; फिर ब्रज मण्डल में अपने शिष्य रूप और सनातन गोस्वामी पर तथा बङ्गदेश में अद्वैत और नित्यानन्द महाप्रभु पर धर्म प्रचार का भार छोड़कर आप १८ वर्ष तक नीलाचल में श्री जगन्नाथ जी की सेवा में नियुक्त रहे। चैतन्यदेव, अद्वैत और नित्यानन्द इन तीनों का इस सम्प्रदाय में समान आदर है, तीनों महाप्रभु कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त रूप सनातनादि ६ गोस्वामी आदिमहन्त कहे जाते हैं, और उनका बड़ा मान्य है। इन लोगों के वंशधर श्री वृन्दावन, नदिया, शांतिपुर आदि स्थानों में गोस्वामी कहलाते हैं, और उनका बड़ा मान्य है। इनके अतिरिक्त इस सम्प्रदाय के ६४ महन्त प्रसिद्ध हैं। इनमें से बहुत लोगों का नाम इस "भक्तनामावली" में है। Catalogus Catalogorum में चैतन्य देव के बनाए इतने संस्कृत ग्रन्थ लिखे हैं—

गोपाल चरित्र

तत्वसार

प्रेमामृत

संक्षेप भागवतामृत

हरिनाम कवच

चैतन्यदेव को लोग कृष्णावतार मानते हैं

---

(१४)

श्री नित्यानन्द महाप्रभु

दोहा १७, १८—इनको Catalogus Catalogorum में कृष्ण-चैतन्य का भाई लिखा है, परन्तु बाबू अक्षयकुमारदत्त ने अपने "भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय में इन्हें नवद्वीप के एक राढ़ीय

सम्भ्रान्त वंश का लिखा है। साम्प्रदायिक ग्रन्थों में इनको बलराम जी का अवतार माना है इससे ये चैतन्य देव के बड़े भाई जान पड़ते हैं। ये गृहस्थ थे और इनका वंश अब तक नवद्वीप में परम मान्य है। Catalogus Catalogorum में इनको गङ्गादेवी का पिता लिखा है। चैतन्य देव ने इनपर बङ्गदेश में वैष्णव धर्म के प्रचार का भार दिया था।

(१५)

श्री रूप गोस्वामी

दोहा १९,२०,२१–कर्णाट देश के राजा सर्वज्ञ नामक थे, उनके पुत्र अनिरुद्ध देव, उनके रूपेश्वर और हरिहर, रूपेश्वर के पद्मनाभ, उनके पुरुषोत्तम, जगन्नाथ, नारायण, मुरारी और मुकुन्द ये पांच पुत्र, मुकुन्द के कुमार, उनके सनातन, रूप और बल्लभ ये तीन पुत्र हुए (See Catalogus Catalogorum, page 701)। "भक्तमाल" की टीका के अनुसार ये लोग बङ्गदेश में रहते थे और बादशाही पदाधिकारी थे। चित्त में वैराग्य उदय होने से ये लोग सब छोड़ श्री नित्यानन्द महाप्रभु के शिष्य हुए और गुरू की आज्ञानुसार श्री वृन्दावन में आकर धर्म प्रचार करने लगे। मिस्टर ग्राउस के लेखानुसार उस समय श्री वृन्दाबन में बन ही बन था, कुछ झोपड़े मात्र थे। इन दोनो भाइयों ने अपने शिष्य नारायण भट्ट की सहायता से सब तीर्थों और देवस्थानों का पता लगा लगा कर मूर्तिएं स्थापित कीं। रूप गोस्वामी के सेव्य श्री गोविन्ददेव जी ठाकुर थे। इन गोविन्ददेव जी का मन्दिर बहुत भारी श्री वृन्दाबन में आमेर (जयपुर) के राजा मानसिंह ने सम्वत १६४५ में बनवाया था। "भक्तमाल" की टीका के अनुसार इस मन्दिर के बनने में केवल मसाले और मजूरी में तेरह लाख रुपए लगे थे। औरङ्गज़ेब के उपद्रव से इनकी मूर्ति को महाराज जयसिंह जयपुर उठा ले गए और राजमहल में बड़ा भारी मन्दिर बनवाकर पधराया। राज्य में अब तक इन्हींकी मुहर चलती है। उस समय से वृन्दाबन का वह मन्दिर टूटा फूटा पड़ा था। सन् १८७३ ई० में मिस्टर ग्राउस की

कृपा से गवर्न्मेंन्ट ने पांच हज़ार रुपया लगा कर इस मन्दिर की मरम्मत करादी है। यह मन्दिर दर्शनीय है। मिस्टर ग्राउस अनुमान करते हैं कि ब्रह्मवैवर्त पुराण इन्हींने बनाया। इन दोनों भाइयों की अस्थि श्री राधादामोदर जी के मन्दिर (श्री वृन्दावन) में संचित है।

Catalogus Catalogorum के अनुसार निम्नलिखित ग्रन्थ इनके रचित हैं—

१	उज्ज्वल नीलमणि	२	उत्कलिकावल्लरी (सन् १५५० में बनाया)
३	उद्धवदूत	४	उपदेशामृत
५	कार्पण्य पुञ्जिका	६	गङ्गाष्टक
७	गोविन्द विरुदावली	८	गौराङ्गसुरकल्पतरु
९	चैतन्याष्टक	१०	छन्दोष्टादशक
११	दानकेलिकौमुदी	१२	नाटक चन्द्रिका
१३	पद्यावली	१४	परमार्थ सन्दर्भ
१५	प्रीति सन्दर्भ	१६	प्रेमेन्दुसागर
१७	भक्ति रसामृतसिन्धु (?)	१८	मथुरामहिमा
१९	मुकुन्द मुक्तारत्नावलि टीका	२०	यमुनाष्टक
२१	रसामृत	२२	ललितमाधव नाटक
२३	विदग्धमाधव नाटक (सन् १५४९ में बनाया)	२४	विलापकुसुमाञ्जलि
२५	व्रज विलासस्तव	२६	शिक्षादर्शक
२७	संक्षेपामृत	२८	साधन पद्धति
२९	स्तवमाला	३०	हंसदूतकाव्य
३१	हरिनामामृत व्याकरण (?)	३२	हरेकृष्ण महामन्त्रार्थ निरूपण

---

(१६)

श्री सनातन गोस्वामी

दोहा १९, २०, २१—ये महानुभाव रूप गोस्वामी जी के बड़े भाई थे। ये दोनों भाई एक साथ ही रहे और व्रजमण्डल में वैष्णव धर्म

का प्रचार करते रहे। इनके सेव्य ठाकुर श्री मदनमोहन जी का बहुत बड़ा मन्दिर श्री वृन्दाबन में है। ठाकुर जी की मूर्ति करौली राज्य में बिराजती है। इस मन्दिर के शिलालेख से पता लगता है कि इसके बनवाने वाले कोई गुणानन्द नामक महाशय थे। परन्तु बनने का समय नहीं दिया है। एक दूसरा लेख मिला है जिसमें किसी ने सम्बत् १६८४ में दर्शन करके अपना नाम खुदवा दिया था। अतः यह मन्दिर इसके पहिले का बना है। इन्हीं मदनमोहन जी के शिष्य एक सूरदास जी बड़े कवि थे। वे संडीले के अमीन थे, और उनकी भक्ति की बहुत कुछ कहावत प्रसिद्ध हैं। सनातन गोस्वामी ने Catalogus Catalogorum के अनुसार इतने ग्रन्थ बनाए—

१	उज्ज्वल रसकणा	२	उज्ज्वल नीलमणि टीका
३	भक्तिबिन्दु	४	भक्तिसन्दर्भ
५	भक्तिरसामृतसिन्धु	६	भागवत क्रमसन्दर्भ
७	भागवतामृत	८	योगशतक व्याख्यान
९	विष्णु तोषिणी	१०	स्तवमाला (?)
११	हरि भक्ति विलास		

इनका विशेष चरित्र रूप गोस्वामी (नं० १५) के वर्णन में देखिए।

(१७)

रघुनन्दन

दोहा २२—इनका किसी ग्रन्थ में कुछ पता नहीं चलता। सम्भवतः ये चैतन्य सम्प्रदाय के थे। ध्रुवदास जी के लेख से जान पड़ता है कि कहीं बाहर के रहने वाले थे, परन्तु अन्तावस्था में व्रज में आ रहे थे। Catalogus Catalogorum में कई रघुनन्दन का नाम मिलता है।

---

(१८)

सारङ्ग जी

दोहा २२—इनका वर्णन पूर्वकथित रघुनन्दन के साथ हुआ है। इससे यह भी कहीं बाहर के रहनेवाले जान पड़ते हैं, परन्तु

व्रज में आ रहे थे। चैतन्य सम्प्रदाय के ६४ महन्तों में एक शारङ्गदास का नाम मिलता है।

(१९)

रघुनाथ जी

दोहा २४–ये चैतन्य सम्प्रदाय के ४ महन्तों में थे, और रघुनाथ गोस्वामी कहलाते थे। तथा बङ्गदेश के अच्छे ज़िमींदार थे। सब छोड़कर पहिले ये श्री जगदीशपुरी में रहे, फिर व्रज में आए। व्रज में आकर श्रीराधाकुण्ड पर रहे। व्रज के नमक और दधि के अतिरिक्त और कुछ इन्होंने भोजन न किया। रात दिन ये श्री राधाकृष्ण जपा करते थे। Catalogus Catalogorum में रघुनाथदास गोस्वामी रचित इतने ग्रन्थों के नाम मिलते हैं—

गुणलेश सुखद
मनःशिक्षा
सुरावली

(२०)

श्री विलास

दोहा २५—ध्रुवदास जी के लिखने से श्री विलास, व्रजनाथ (नं० २१) और श्री चन्द मुकुन्द या श्री मुकुन्द चन्द (नं० २२) ये तीनो महात्मा सनातन गोस्वामी के सेव्य श्री मदनमोहन जी ठाकुर के परम भक्त थे, और कहीं इनका नाम नहीं मिलता।

---

(२१)

व्रजनाथ

दोहा २५—श्री विलास जी (नं० २०) के वर्णन में देखिए।

(२२)

श्री चन्द मुकुन्द

दोहा २५—श्री विलास जी (नं० २०) के वर्णन में देखिए। एक मुकुन्द चैतन्य सम्प्रदाय के ६४ महन्तों में भी हैं। मुकुन्द नाम के भाषा के भी कई कवि हुए हैं।

---

(२३)

महापुरुषनन्दा

दोहा २६, २७—ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये सखी का वेश किए हुए भगवद्भक्ति में मग्न श्री वृन्दावन में घूमा करते थे और कहीं इनका उल्लेख नहीं मिलता।

---

(२४)

कृष्णदास जङ्गली

दोहा २८—ध्रुवदास जी ने इनको भी भक्तिरस में निमग्न लिखा है। कृष्णदास जी नाम के बहुत से महात्मा हुए हैं। कई एक तो श्री बल्लभीय सम्प्रदाय में हैं। कई भक्तमाल में लिखे हैं। परन्तु कृष्णदास जङ्गली नाम कहीं नहीं मिलता। कृष्णदास पैहारी (नं० १२१ में इनका वर्णन देखिए) अग्रदास जी के गुरू, और कृष्णदास अधिकारी (नं० ९४) श्री बल्लभीय सम्प्रदाय के, अधिक प्रसिद्ध हैं। एक कृष्णदास बङ्गाली "चैतन्य चरितामृत" के कर्ता थे। एक हित कृष्णदास भाषा कवि श्री हित हरिवंश जी के सम्प्रदाय में भी हुए हैं। एक कृष्णदास कवि "भक्तमाल" के टीकाकार और भ्रमरगीतादि के कर्ता हुए हैं। Catalogus Catalogorum में कई एक संस्कृत कवि कृष्णदास नाम के हैं।

---

(२५)

प्रबोध वा प्रबोधानन्द सरस्वती

दोहा २९.—ये श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु के ६४ महन्तों में से थे। बड़े सुकवि थे। बङ्गाल से आकर श्री वृन्दाबन बास करते थे। Catalogus Catalogorum में इनके बनाए निम्न लिखित ग्रन्थों के नाम हैं—

चैतन्यचन्द्रामृत
विवेकशतक।
वृन्दाबनशतक
सङ्गीत माधव।

---

(२६)

श्री गोपाल भट्ट

दोहा ३०—इनके पिता का नाम व्यङ्कट भट्ट था। ये श्री कृष्ण-चैतन्य महाप्रभु के ६४ महन्तों में से थे। श्री राधारमण जी इनके ठाकुर श्री वृन्दावन में परम पूज्य हैं। बड़ी मनोहर मूर्ति है। सब छोड़कर श्री वृन्दाबन बास किया। कहते हैं कि गोपालभट्ट जी शालिग्राम जी की सेवा करते थे, इच्छा हुई कि भगवत्मूर्ति होती तो सेवा का आनन्द आता। उसी समय शालिग्राम शिला से भगवत्मूर्ति का प्रादुर्भाव हुआ। अब तक श्री राधारमण जी की मूर्ति में शालिग्राम जी का आधा टुकड़ा चरण में और आधा कमर में लगा है। डाक्टर ग्रिअर्सन लिखते हैं कि इनके पुत्र नाथ-भट्ट जिनका जन्म सम्वत् १६४१ (सन् १५८४ ईसवी) में था, भाषा के अच्छे कवि थे। इनके वंशज गोस्वामी लोग अब तक श्री राधारमण जी के मन्दिर के अधिकारी हैं और उनके शिष्य बहुतेरे इस प्रान्त के धनिक लोग हैं।

Catalogus Catalogorum में इनके रचित ये ग्रन्थ लिखे हैं—

भगवद्भक्तिविलास
हरिभक्तिविलास।

(२७)

घमण्डी

दोहा ३१—ध्रुवदास जी के अनुसार ये श्री वृन्दावन में बंसीवट पर रहते थे। परम भक्त थे। भक्तमाल में भी इनका नाम मात्र गिनाया है और कहीं कुछ पता नहीं है। रासधारी बिहारीलाल जी के पुत्र राधाकृष्ण जी के "राससर्वस्व" ग्रन्थ से इनका पूरा पता लगता है। ये करहला गांव में रहते थे और श्री स्वामी हरिदास जी की आज्ञा से इन्होंने हीं रासलीला का अनुकरण क्रम से आरम्भ किया था। इनकी समाधि अब तक करहला में है।

---

(२८)

श्री नारायन भट्ट

दोहा ३२—इनके पिता का नाम भास्कर था। ये सनातन गोस्वामी के शिष्य थे। डाक्टर ग्रिअर्सन के मतानुसार इनका जन्म सन् १५६३ ईसवी में हुआ था। अपने गुरू सनातन गोस्वामी से श्रीमद्भागवत की कथा सुनकर इन्हें भगवद्लीला प्रकाश और व्रज के गुप्त स्थानों के प्रगट करने की उत्कट इच्छा हुई, तब इन्होंने पुराणों से पता लगा लगा कर व्रज के सब स्थानों को प्रगट किया, और रासलीला का आरम्भ कराया। इन दिनों लोग जो व्रजयात्रा करते हैं वह इन्हींके प्रदर्शित पथ से और इन्हींके आविष्कृत स्थान और देवता इस समय पूज्य हैं। इन्होंने सम्वत् १६१० (सन् १५५३ ईसवी) में "व्रजभक्तिविलास" नामक एक ग्रन्थ बनाया है, जिसमें व्रज के स्थानों और माहात्म्य का वर्णन किया है। कहते हैं कि ये बरसाना के पास ऊंचगांव के रहने वाले हैं, परन्तु उक्त ग्रन्थ को उन्होंने श्रीकुण्ड अर्थात् राधाकुण्ड पर लिखा है। इस ग्रन्थ में इन्होंने १३३ वनों का वर्णन किया है, जिनमें से ९१ यमुना जी के इस पार हैं और ४२ उस पार (See Growse's Mathura, page 82) "भक्तमाल" में लिखा है कि ये बड़े पण्डित थे और ज्ञान तथा स्मार्तवाद के खण्डन में परम निपुण थे। राधाकृष्ण जी रचित "रासमर्वस्व" में इनका वृत्तान्त यों दिया है कि

मथुरा से तेरह कोस पर दक्षिण पश्चिम के कोने में मन्द्राज गांव है। वहीं दीक्षित भृगुवंश में सम्वत् १६८८ में इनका जन्म हुआ। १२ वर्ष की अवस्था में गुरू की आज्ञा से राधाकुण्ड पर आ बसे। सात बरस वहां रह कर सम्वत् १७१० में बरसाने के पास ऊंचेगांव में आकर रहे। इसी समय तीर्थों में आ सम्वत् १७१४ में यथानियम वर्त्तमान शैली की रासलीला चलाया। परन्तु इस लेख से "ब्रजभक्तिविलास" के बनने के समय से पूरे सौ वर्ष का अन्तर पड़ता है, जो कि निःसन्देह "राससर्वस्वकार" की भूल है।

---

(२९)

वर्द्धमान

दोहा ३३—ये और गङ्गल भट्ट (नं० ३१) भीष्म भट्ट के पुत्र थे। ये निम्बादित्य सम्प्रदाय के थे। ध्रुवदास जी के लेख से ये कवि जान पड़ते हैं। "भक्तमाल" से विदित होता है कि ये श्री मद्भागवत की कथा द्वारा उपदेश दिया करते थे और दोनों पर बड़ी दया रखते थे।

---

(३०)

श्री भट्ट

दोहा ३३—निम्बार्क सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध केशव भट्ट काश्मीरी के शिष्य थे। भाषा के बड़े प्रसिद्ध और उत्तम कवि थे। डाक्टर ग्रिअर्सन ने इनका जन्म-समय सन् १५४४ ईसवी लिखा है और भ्रम से इन्होंको केशव भट्ट अनुमान किया है। इनके बनाए युगल-शत आदि भाषा के ग्रंथ हैं। हरिव्यास देव इनके शिष्य थे, जिनसे हरिवंशी (राधावल्लभी), हरिदासी, आदि पांच शाखा निम्बार्क सम्प्रदाय की चली हैं। Catalogus Catalogorum में इनका नाम तो लिखा है, परन्तु इनके बनाए किसी संस्कृत ग्रन्थ का नाम नहीं दिया है।

---

(३१)

गङ्गल

दोहा ३३—[बर्द्ध मान (नं० २९) देखिए] निम्बार्क सम्प्रदाय के गुरू परम्परा में इनका नाम है, यथा—श्री निवासाचार्य, विश्वाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य, विलासाचार्य स्वरूपाचार्य, माधवाचार्य, बलभद्राचार्य, पद्माचार्य, श्यामाचार्य, गोपालाचार्य कृपाचार्य, देवाचार्य, सुन्दर भट्ट, पद्मनाभ भट्ट, उपेन्द्र भट्ट, रामचन्द्र भट्ट, बामनभट्ट, कृष्ण भट्ट, पद्माकर भट्ट, भूरि भट्ट, माधव भट्ट, श्याम भट्ट, गोपाल भट्ट, बलभद्र भट्ट, गोपीनाथ भट्ट, केशव भट्ट, गङ्गल भट्ट, केशव काश्मोरि भट्ट, श्री भट्ट, हरिव्यास देव। Catalogus Catalogorum वाले ने इनका वर्णन गङ्ग भट्ट कहकर किया है, परन्तु इनके रचित किसी ग्रन्थ का नाम नहीं दिया है।

---

(३२)

गदाधर भट्ट

दोहा ३४—ये भाषा के अत्युत्कृष्ट कवि थे। इनका निवासस्थान कहीं बाहर था। इनका बनाया "सखी हौं श्याम रङ्ग रङ्गी" पद सुनकर श्री जीव गोशाईं जी ऐसे मोहित हुए कि अपने शिष्यों को भेज कर ऐसी उत्तेजना दिलाई कि ये सीधे श्रीवृन्दावन चले आए और फिर आजन्म यहीं रहे। इनकी श्रीमद्भागवत की कथा सुनकर कितने ही लोग विरक्त हो गए। एक कल्याणसिंह क्षत्री विरक्त हो गया। उसकी स्त्री ने एक दुराचारिणी स्त्री के द्वारा इन्हें कथा के समय ही कलङ्क लगाया, परन्तु इन्हें कुछ भी क्षोभ न हुआ; अन्त में सच्ची बात खुल गई। इनके विरक्तता की अनेक कथा प्रसिद्ध हैं। परन्तु यह ठीक पता नहीं चलता कि ये कौन थे और कहां के थे, दो गदाधर भट्ट श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु के चौंसठ महन्तों में थे परन्तु जीव गोस्वामी के सख्य से सन्देह होता है कि यह उनमें से नहीं थे, क्योंकि चैतन्य महाप्रभु इनके दादा गुरू थे और इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं है कि ये बङ्गाली कदापि नहीं थे। इनके

समान उत्कृष्ट कविता बिरले ही कवियों की होती है। डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक गदाधरदास को कृष्णदास पयहारी के शिष्य लिखा है, तथाच कृष्णानन्द व्यास के प्रसङ्ग में इनका नाम दिया है। परन्तु नं० ५१२ में जिन गदाधर भट्ट बांदा वाले का वर्णन किया है यह वह नहीं हैं। एक गदाधर मिश्र श्रीवल्लभाचार्य जी के शिष्यों में भी अच्छे कवि थे।

गदाधर भट्ट जी की बानी "हरिश्चन्द्र मेगज़ीन" में छप गई है।

---

(३३)

नाथभट्ट

दोहा ३४–ये श्रीराधारमन जी की गद्दी के महन्त श्रीगोपाल भट्ट जी के पुत्र थे। भाषा के अच्छे सुकबि थे। ऊंचेगांव में रहते थे। परम विरक्त थे और रासलीला के बड़े अनुरागी थे।

---

(३४)

गोविन्दस्वामी

दोहा ३५—ये सनौड़िया ब्राह्मण थे, आंतरी में रहते थे, वहां से आकर महाबन में रहे, वहां स्वयं लोगों को दीक्षा देते और सेवक करते थे। पीछे गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथ जी के शिष्य हो गए, और तबसे गोबर्धन पर श्रीनाथ जी की सेवा में रहने लगे। कहते हैं कि इनसे श्रीनाथ जी से सख्यभाव था। ये भाषा के महान् कवि थे, अष्टछाप में इनकी गिनती है। ये गवैये भी बड़े भारी थे, तानसेन भी इनके गाने से मोहित होते थे। इनके बनाए पद बिना गवैयों के गाना कठिन है। एक दिन ये भैरव राग गाते थे, किसी म्लेच्छ ने उसकी प्रशंसा कर दी, तब से वह राग छूट गया, अर्थात् बल्लभीय सम्प्रदाय में श्रीठाकुर जी के सामने भैरव या भैरवी नहीं गाई जाती। "गोविन्दस्वामी की कदम्बखण्डी" नामक कदम्ब वृक्ष का उपवन अब तक श्रीगोबर्धन के पास विद्यमान है। "भक्तमाल" की टीका तथा "दो सौ बावन वैष्णव की बार्ता" में इनका चरित्र विस्तृत रूप से लिखा है।

(३५)

गङ्ग अर्थात् गङ्गग्वाल

दोहा ३५—"भक्तमाल" में इनका वर्णन है। इन्हें ब्रजनाथ जी† का चेला लिखा है और लिखा है कि ये बड़े कवि तथा गवैये थे। बादशाह (सम्भवतः अकबर) जब श्री वृन्दावन आया तब उसने इनको बुला कर गाना सुना और ऐसा मोहित हुआ कि इन्हें दिल्ली ले जाना चाहा। जब ये न गए तो इन्हें क़ैद करके ले गया। राजा हरिदास तोदर राजपूत* ने सुना तब इन्हें बादशाह से सिफ़ारिश करके छुड़ा दिया। "भक्तमाल" में इनके साथ श्रीवल्लभाचार्य जी के वर्णन से जान पड़ता है कि ये श्रीवल्लभाचार्य के सम्प्रदाय में थे। एक गङ्गभट्ट या गङ्गलभट्ट (नं० ३१) निम्बार्क सम्प्रदाय में भी थे जो कि केशव भट्ट के शिष्य थे और एक प्रसिद्ध कवि गङ्ग अकबर के दरबार में भी थे। डाक्टर ग्रिअर्सन ने इन गङ्गग्वाल का वर्णन नहीं किया है।

---

(३६)

विष्णुविचित्र

दोहा ३५—ध्रुवदास जी ने इनको अच्छा कवि लिखा है परन्तु मुझे "भक्तमाल" आदि में कहीं पता न लगा। मुझे स्मरण आता है कि मैंने इनकी कुछ कविता भी देखी है।

---

(३७)

रघुनाथ

दोहा ३६—ध्रुवदास जी के लेख से श्री मदनमोहन जी के सेवक तथा सुकवि जाने जाते हैं, अतः सम्भव है कि ये चैतन्य सम्प्रदाय के हों। चैतन्य महाप्रभु के ६४ महन्तों में रघुनाथ

---

* भक्तमाल में इनको पाटन नगर का राजा लिखा है।

† सम्भव है कि ये श्रीवल्लभाचार्य जी के प्रपौत्र श्रीब्रजनाथ जी के शिष्य हों, जिनका जन्म सं० १६३२ में हुआ था।

दास गोशांई को छोड़कर दो रघुनाथ भट्ट हैं। सम्भव है इनमें से कोई हो। Catalogus Catalogorum में बहुत से रघुनाथ हैं, जिनमें से एक रघुनाथ दास रूप गोस्वामि रचित "दानकेलि कौमुदी" के टीकाकार तथा "सारातसारतत्व सङ्ग्रह" के कर्ता लिखे हैं। सम्भव है कि यह वही हो। एक गोस्वामी रघुनाथ जी श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के पौत्र भी थे।

---

(३८)

गिरिधर स्वामी

दोहा ३७—ये बड़े कवि थे। इनके भजन वैष्णव मन्दिरों में अब तक गाए जाते हैं। ध्रुवदास जी के लिखने से विदित होता है कि ये श्री वृन्दावन में रहते थे। "भक्तमाल" में इन्हें परम उदार और भक्त लिखा है। लिखा है कि एक बेर मालपुरा गांव में रास कराया था। वहां ऐसे प्रेममग्न हो गए कि अपना सर्बस्व भगवत् भेट कर दिया। डाक्तर ग्रिअर्सन ने कई एक गिरिधर का वर्णन किया है, परन्तु इनका वर्णन नहीं है, केवल कृष्णानन्द व्यास के प्रसङ्ग में इनका नाम मात्र आ गया है।

---

(३९)

बिट्ठलबिपुल

दोहा ३८—ये स्वामी हरिदास जी के मामा थे और पहिले पहिल यही उनके शिष्य भी हुए। स्वामी जी के पीछे यही उनकी गद्दी के अधिकारी हुए। ये बड़े सुकवि थे। डाक्तर ग्रिअर्सन लिखते हैं कि ये मधुबन के राजा के दर्बारी थे। रास के बड़े अनुरागी थे। "रास सर्वस्व" में लिखा है कि स्वामी हरिदास जी की मृत्यु पर इन्होंने अपनी आंखो में पट्टी बांध ली थी, जिसको रास में श्री ठाकुर जी ने अपने हाथ से खोला था। "भक्तमाल" के अनुसार रास लीला में ये ऐसे मग्न हुए कि उसी समय इनका शरीर छूट गया।

(४०)

बिहारिनि दास

दोहा ३९-४०—विट्ठलविपुल जी के पीछे हरिदास स्वामी की गद्दी पर यह बैठे। बहुत बड़े कवि थे और बहुत कविता बनाई है। प्रेम में ऐसे मग्न थे कि गद्दी का काम कुछ नहीं देख सकते थे। तब (मिस्टर ग्राउस के लेखानुसार) प्रबन्ध करने के लिये कोल से सारस्वत ब्राह्मण जगन्नाथ बुलाकर रक्खे गए थे। इन्हों-ने अपने एक पद में बीरबल के मारे जाने का वर्णन किया है, जिससे इनकी मृत्यु का समय इसके पीछे ही विदित होता है। बीरबल सन् १५९० (सम्वत् १६४७) में मारे गए थे।

---

(४१)

व्यास जी

दोहा ४१ से ४५ तक-ये उड़छा के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम सुमुखन भक्त था। बड़े पण्डित थे। सब स्थान में बाद करते श्री वृन्दाबन आए। यहां गोस्वामी श्री हित हरिबंश जी के दर्शन से ऐसे मोहित हुए कि इनके शिष्य हो गए। "भक्तमाल" की टीका के अनुसार सन् १६१२ में पैंतालीस वर्ष की अवस्था में श्री वृन्दाबन आए। व्यास जी के सेव्य ठाकुर श्री युगुल किशोर जी हैं, जो अब पन्ना राज्य में बिराजते हैं। श्री वृन्दाबन में इनका मन्दिर १६८४ का बनवाया भग्नावस्था में पड़ा है। इसको नोन करण नामक किसी चौहान राजपूत ने बनवाया था। (See Growses Mathura page 234) व्यास जी को घर लौटा ले जाने के लिये उड़छा के राजा तथा इनके घर के लोगों ने जब बड़ा पीछा किया, तब इन्होंने सबके देखते श्री गोबिन्ददेव जी के मन्दिर का जूठा महाप्रसाद भङ्गी के हाथ से लेकर खा लिया। सब इनसे निराश होकर चले गए। बड़े सुकवि थे। इनकी कविता से ऐतिहासिक बहुतेरी बातों का पता लगता है। जैसे "मथुरा लुटत कटत वृन्दाबन", तथा सूरदास जी आदि महात्माओं का समसामयिक होना। रास के ये बड़े प्रेमी थे। लिखा

भी है कि "साईं व्यास जो रास करावै" रास में एक दिन श्री राधिका जी का नूपुर खुल गया, चट आपने अपना जनेऊ तोड़ कर बांध दिया। बेटी के व्याह के निमित्त जो सब पक्वान्न बने थे सब साधुओं को खिला दिया। श्री हरिवंश जी के पिता व्यास जी और इनके नाम में प्रायः लोगों ने धोखा खाया है, तथाच निम्बार्क सम्प्रदाय के श्री भट्ट जी के शिष्य हरिव्यास जी को और इनको एक करने में भी लोगों ने भ्रम खाया है। व्यास जी की समाधि अब तक श्री वृन्दावन में है।

---

(४२)

नरवाहन

दोहा ४६—ये पहिले ठग थे। भोगांव में रहते थे। पीछे गोस्वामी हित हरिवंश जी के शिष्य हो गए। "भक्तमाल" में भी इनका वर्णन है। राजा नागरीदास जी ने "पद प्रसङ्ग माला' ग्रन्थ में लिखा है कि ये व्रज के एक ज़िमींदार थे, डाका मारा करते थे, एक वेर एक साहूकार को लूटा, लाखों का धन पाया, साहूकार को भी बन्दी कर रक्खा, पीछे विदित हुआ कि यह भी हरिवंश जी का शिष्य है तब उसका धन लौटाया और बहुत बिनती कर उसे छोड़ दिया। इस गुरुभक्ति पर हरि- वंश जी ऐसे प्रसन्न हुए कि दो पद इन्हींको छाप देकर बनाया और अपनी चौरासी में रख दिया।

---

(४३)

नाइक

दोहा ४७—ध्रुवदास जी के लेख से यह विदित होता है कि ये और रसिक मुकुन्द जी (नं० ४४) घर द्वार छोड़ कर श्री- वृन्दावन आ बसे थे। "भक्तमाल" आदि में कहीं इनका नाम नहीं मिला। डाक्टर ग्रिअर्सन ने सरदार कवि के संग्रह के आधार पर इनका और मुकुन्द कवि का नाम लिखा है।

(४४)

रसिक मुकुन्द

दोहा ४७—(नाइक जी नं० ४३ का चरित्र देखिए) एक मुकुन्द जी (चैतन्य महाप्रभु के) ६४ महन्तों में भी लिखे हैं।

(४५)

चतुर्भुजदास

दोहा ४८-४९.—ये गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। अष्टछाप में थे। श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य कुम्भनदास जी के सप्तम पुत्र थे। जमनावते ग्राम के रहने वाले थे। राजा नागरीदास जी तथा "वार्त्ता" के अनुसार इनको अलु गौरवा थी। ये पिता पुत्र अत्यन्त भजनहीन थे। बड़े सुकवि थे। डाक्टर ग्रिअर्सन लिखते हैं कि एक चतुर्भुज मिश्र भाषा दशमस्कन्ध श्रीमद्भागवत के कर्ता थे।

---

(४६)

वैष्णवदास

दोहा ४८-४९—ये सुकवि थे। ध्रुवदासजी ने इनकी कविता की बहुत प्रशंसा लिखी है। इनकी कविता वल्लभीय मन्दिरों में गाई भी जाती है परन्तु इनका वर्णन मुझे और कहीं "भक्तमाल" या डाक्टर ग्रिअर्सन के ग्रन्थादि में नहीं मिला।

---

(४७)

परमानन्ददास

दोहा ५०-५१—इन दोनो दोहों में परमानन्द, किशोर, (नं० ४८) दोनो संत, (नं० ४९) मनोहर, (नं० ५०) और खेम (नं० ५१)इतने महात्माओं का वर्णन है। सब लोगों का भजन में प्रवीन होना और सर्वस्व त्याग कर व्रज में रहना लिखा है।

परमानन्द इस ग्रन्थ में चार लिखे हैं। "भक्तमाल" में केवल एक अष्टछापवाले परमानन्ददास का वर्णन मिलता है। एक परमानन्द पुरी चैतन्य महाप्रभु के चौसठ महन्तों में थे। दूसरे हरिव्यासी सम्प्रदाय की दूसरी शाखा के कर्णदेव जी के शिष्य परमानन्द देव थे, तीसरे हरिवंश जी के शिष्य परमानन्द रसिक थे, और चौथे अष्टछापवाले प्रसिद्ध परमानन्ददास थे। डाक्तर ग्रिअर्सन ने केवल अष्ट छापवाले परमानन्द दास का वर्णन किया है।

Catalogus Catalogorum में कई परमानन्द का नाम है, जिनमें से निम्नलिखित महात्माओं में से कोई इन चारों में हो सकते हैं—

(१) श्रीधर स्वामी के गुरु परमानन्द ।

(२) कवि कर्णपूर गोस्वामी का पूर्व नाम। ये चैतन्य सम्प्रदाय के थे। इनके पिता का नाम शिवानन्दसेन था। सन् १५२४ (सं० १५८१) में नदिया प्रान्त के कांचनपल्ली ग्राम में जन्म हुआ था।

इनके पुत्र कविचन्द्र प्रसिद्ध थे। इनके बनाए इतने ग्रन्थ हैं–

अलङ्कार कौस्तुभ
आनन्द वृन्दाबन चम्पू
गौराङ्ग गणोद्देश दीपिका
चमत्कार चन्द्रिका
चैतन्य चन्द्रोदय नाटक
वृहत् कृष्णगणोद्देश दीपिका
वर्णप्रकाश

(३) संस्कृत रत्नमाला के कर्ता परमानन्द देव।

एक परमानन्द सोनी गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी के दो सौ बावन शिष्यों में भी हुए है।

---

(४८)

किशोर जी

दोहा ५०-५१—(परमानन्द नं० ४७ देखिए)

"भक्तमाल" में राठौर राजपूत राजा खेमाल के पौत्र किशोर जी

का वर्णन लिखा है कि अपने दादा की आज्ञानुसार ये स्वयं श्री ठाकुर जी के लिये अपने कन्धे पर जल भर लाया करते थे और नूपुर बांध कर स्वयं श्री ठाकुर जी के आगे नृत्य करते थे। और कहीं इनका पता नहीं चला।

---

(४९)

दोनो संत

दोहा ५०–५१—(परमानन्द नं० ४७ देखिए)।

(१) सन्तभक्त—भक्तमाल में जोधपुर के रहनेवाले लिखा है। गांवों से भिक्षा मांगकर साधुओं का सत्कार करते थे।

(२) सन्तदास—"भक्तमाल" में इनको निवाई गांव के रहने वाले विमलानन्द के प्रबोधन वंश में उत्पन्न लिखा है। बड़े कवि थे। सूरदास जी के समान काव्य करते थे। स्त्री सहित भगवत् सेवा तथा साधु सेवा में रत रहते थे।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक सन्त कवि और एक सन्तदास और एक सन्तजीव का नाम लिखा है।

एक सन्तदास खत्री श्री बल्लभाचार्य महाप्रभु के ८४ शिष्यों में भी थे।

---

(५०)

मनोहर

दोहा ५०–५१—(परमानन्द नं० ४७ देखिए)।

इनका पता और कहीं नहीं लगता। डाक्टर ग्रिअर्सन ने इनका समय सन् १५७७ लिखा है और लिखा है कि ये अकबर के दर्बारी और ४०० सेना के अधिपति थे। कछवाहा राजा लोनकरण के पुत्र थे। फ़ारसी, संस्कृत और भाषा तीनों में काव्य की है। फ़ारसी में इनका तख़ल्लुस (छाप) तोसनी था।

Catalogus Catalogorum में भी कई मनोहर लिखे हैं। एक राजा मनोहर का भी वर्णन किया है जिनसे सदाशिव ने आश्रय पाया था।

(५१)

खेम या खेम गोसाईं

दोहा ५०-५१—(परमानन्द नं० ४७ देखिए) ।

"भक्तमाल" में रामदास जी के शिष्य खेम गोशाईं लिखा है। रामचन्द्र जी के अनन्य उपासक थे। धनुष्बाण का छाप सर्वदा भुजा पर लगाते थे।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने "शिवसिंह सरोज" के आधार पर तीन खेम या छेम कवि का वर्णन किया है। एक ब्रज के रहने वाले थे समय लगभग सन् १५७३ के था इन्होंने नायिकाभेद के ग्रन्थ बनाए थे, दूसरे दलमऊ, ज़िला रायबरैली के (समय सन् १५३०) हुमायूं के दर्बार में थे, और तीसरे का ठीक पता नहीं, जन्म सन् १६९८ में लिखा है।

---

(५२)

लालदास स्वामी

दोहा ५२-५३—ध्रुवदास जी के अनुसार ये स्वामी थे। बड़े कवि थे।

"भक्तमाल" में लालदास जी को राजा परीक्षित की भांति परमभगवद्भक्त लिखा है। घघेरा गांव में श्रीमद्भागवत की कथा हुई थी। जिस समय वह समाप्त हुई उसी समय शरीर छोड़ दिया।

"भक्तमाल" में एक लालाचार्य, रामानुज स्वामी के भक्त लिखा है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने लाल कवि कई एक लिखे हैं परन्तु उनमें से यह कोई नहीं जान पड़ते।

---

(५३)

बालकृष्ण

दोहा ५४-५५—ध्रुवदास जी ने लिखा है कि ये बड़े पण्डित थे, परन्तु गर्व का लेश भी न था और मानसी सेवा सिद्ध थी।

"भक्तमाल" में मुझे इनका पता नहीं लगा। डाक्टर ग्रिअर्सन ने जिन कई एक बालकृष्ण का वर्णन किया है उनमें यह नहीं जान पड़ते। इनके पद प्राचीन संग्रहों में पाए जाते हैं और भगवत् मन्दिरों में गाए जाते हैं।

Catalogus Catalogorum में भी कई बालकृष्ण लिखे हैं।

एक बालकृष्ण तुलाराम रासधारी श्री हरिवंश जी के शिष्य "राससर्वस्व" में लिखे हैं।

---

(५४)

ज्ञानू

दोहा ५६—ध्रुवदास जी ने इन्हें और नाहरमल्ल (नं० ५५) को श्री हित हरिवंश जी का अनन्य शिष्य लिखा है। भक्तमाल में नामदेव जी के गुरु ज्ञानदेव का वर्णन है, परन्तु इनका पता कहीं भी नहीं मिला।

---

(५५)

नाहरमल्ल

दोहा ५६—(ज्ञानू नं० ५४ देखिए)। पूज्य भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र कृत "वैष्णवसर्वस्व" में भी नाहरमल्ल को श्री हित हरिवंश जी के प्रधान शिष्यों में लिखा है और कहीं पता नहीं मिलता।

---

(५६)

मोहनदास

दोहा ५७—ध्रुवदास जी ने लिखा है कि ये हित हरिवंश जी के ऐसे अनन्य सेवक थे कि उनका गोलोकगमन समाचार सुनते ही इन्होंने प्राण छोड़ दिया। "वैष्णवसर्वस्व" में श्री हित हरिवंश जी के शिष्यमण्डली में मोहनदास का नाम पाया जाता है।

(५७)

बिट्ठलदास

दोहा ५८—ध्रुवदास जी ने, इन्हें, मुरलीधर ग्रोर गोपालदास के विषय में एक ही दोहा में लिखा है कि सर्वदा सेवा में तत्पर थे ग्रोर श्रीराधाकृष्ण का बिहार वर्णन करते थे।

"वैष्णव सर्वस्व" में बिट्ठलदास जी का नाम श्रीहित हरिवंश जी के शिष्यों में पाया जाता है।

"भक्तमाल" में विट्ठलदास के माथुर चैाबे राना उदयपुर का पुरोहित लिखा है। डाक्तर ग्रिग्रर्सन ने लिखा है कि इन्हींके यहां साधु समाज हुग्रा था जिसमें "भक्तमालकार" नाभा जी के गोशाईं की पदवी मिली थी। इनके पुत्र का नाम कान्हरदास था जो ग्रच्छे सुकवि थे।

"दो सैा बावन वैष्णव की बार्ता" में एक बिट्ठलदास कायस्थ बादशाही ग्रहलकार लिखे।

---

(५८)

मुरलीधर

दोहा ५८-(बिट्ठलदास नं० ५७ देखिए)।

---

(५९)

गोपालदास

दोहा ५८-(बिट्ठलदास नं० ५७ देखिए)। "वैष्णव सर्वस्व" में इनके हरिव्यास देव की दूसरी शाखा में भगवानदास का शिष्य लिखा है।

डाक्तर ग्रिग्रर्सन ने केवल एक गोपालदास कवि ब्रज के लिखा है।

"भक्तमाल" में एक गोपाल जी जयपुर के, एक गोपाल काशी के निकट बावुली गांव के, ग्रोर एक गोपालभट्ट श्रीवृन्दावन के

श्रीराधावल्लभ जी (श्रीहरिवंश जी के ठाकुर) के सेवक लिखा है। सम्भवतः यह यही तीसरे गोपाल भट्ट होंगे। एक गोपाल को कृष्णदास जी पैहारी के शिष्यों में भी गिनाया है।

"चौरासी वैष्णव की वार्ता" में एक गोपालदास बांसवाड़े के, एक गोपालदास खत्री ईटौरा के (ये कवि थे), एक गोपालदास जटाधारी और एक गोपालदास नरोड़ा के लिखे हैं।

"दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता" में एक गोपालदास राजनगर के भाइला कोठारी के दामाद अच्छे सुकवि "वल्लभाख्यान" के कर्त्ता, एक गोपालदास कायस्थ सिंहनद के, एक गोपालदास बड़नगर के, और एक गोपालदास गुजरात के लिखे हैं।

---

(६०)

सुन्दर

दोहा ५९-६०—ध्रुवदास जी ने लिखा है कि मन्दिर की सेवा में ये अहर्निश निमग्न रहते थे और अपनी सब सम्पत्ति सेवा में लगा दी थी, अतः भगवान ने उसे अंगीकार करके अपने सामने इन्हें स्थान दिया।

"भक्तमाल" में इनका नाम मुझे नहीं मिला।

ठाकुर शिवसिंह सेंगर ने एक सुन्दर ठाकुर तिरहुत के राजा, एक सुन्दर कवि भाट असनी के, एक ग्वालियर के प्रसिद्ध कविराय सुन्दर (जो शाहजहां के दर्बारी कवि थे) और एक सुन्दरदास कवि मेवाड़ के दादू जी के शिष्य लिखा है॥

एक सुन्दर ठकुर श्रीचैतन्य महाप्रभु के चौदह पार्षदों में भी थे।

"चौरासी वैष्णव की वार्ता" में एक सुन्दरदास श्रीजगन्नाथ पुरी के पास रहने वाले लिखे हैं।

---

(६१)

गोशाईंदास

दोहा ६१—ध्रुवदास जी के लेख से ये गौड़ अर्थात् चैतन्य सम्प्रदाय के वैष्णव थे।

"चौरासी वैष्णवों की वार्ता" में एक गोशाईंदास सारस्वत का नाम है।

डाक्तर ग्रिअर्सन ने एक गोशाईं कवि राजपुताने के लिखा है।

---

(६२)

नागरी दास

दोहा ६२-६३-६४—ये नागरीदास जी श्री हित हरिवंश जी के शिष्य थे, कहीं बाहर के रहनेवाले थे, श्रीवृन्दावन वास करते थे। "वैष्णव सर्वस्व" में भी श्री हित हरिवंशजी के शिष्यों में नागरीदास जी का नाम लिखा है। ये कवि भी थे। राजा नागरीदास जी ने अपने "पद प्रसङ्गमाला" ग्रन्थ में इन नागरीदास को बरसाने के पास रहने वाले लिखा है और उनकी कविता भी उद्धृत किया है। "रास सर्वस्व" में भी इन्हें सांकरी खोर के रहनेवाले और अच्छे सुकवि लिखा है।

ध्रुवदास जी ने इस ग्रंथ में तीन नागरीदास लिखे हैं। एक यह, दूसरे नागर (नं० ७१), तीसरे नागरीदास (नं० ८३)। शेषोक्त दोनो महात्मा श्रीस्वामी हरिदास जी के शिष्य थे। एक बड़े नागरीदास श्री वल्लभसम्प्रदाय में भी हुए हैं जिनका उल्लेख "वारता" और "उत्तरार्द्ध भक्तमाल" में है।

---

(६३)

बिहारी दास

दोहा ६५-ध्रुवदास जी ने एक ही दोहे में बिहारीदास, दम्पति, जुगुल, माधो और परमानन्द का नाम लिखा है और सभों के श्री वृन्दावन में रहने का उल्लेख किया है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने ब्रज के दो बिहारी कवि का नाम लिखा है। एक का जन्म सन् १६१३ और दूसरे का सन् १६८३। इनमें से एक तो सुप्रसिद्ध बिहारिनिदास जी होंगे और दूसरे सम्भव है कि ये हों।

---

(६४)

दम्पति

दोहा–६५–(बिहारीदास नं० ६३ देखो)

---

(६५)

जुगुल

दोहा ६५–(बिहारीदास नं० ६३ देखो)। डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक जुगुलदास का नाम लिखा है, परन्तु समय नहीं दिया है। इन की कविता भी "राग सागरोद्भव" में संगृहीत है।

---

(६६)

माधो

दोहा ६५–(बिहारीदास नं० ६३ देखो)। "भक्तमाल" में निम्नलिखित तीन माधो का वर्णन है–

१. माधवग्वाल—परमभगवद्भक्त साधुसेवी थे।

२ माधवदास जगन्नाथपुरी वाले–इनका वर्णन आगे होगा।

३. माधवदास कन्धागढ़ के—ये जब कीर्तन करते थे तो प्रेममग्न होकर लोटने लगते थे। उस देश के राजा ने परीक्षा के लिये एक दिन तिमञ्ज़िले कोठे पर वैष्णवों का समाज किया, उसमें इन्हें भी बुलाया। ये कीर्तन करते करते ऐसे प्रेमविह्वल हुए कि लोटते लोटते नीचे आ गिरे, पर किसी अङ्ग में तनिक भी चोट न आई।

ध्रुवदास जी ने चार माधोदास का उल्लेख किया है। एक यह, दूसरे नं ८५, तीसरे नं० १०४ बरसाने वाले और चौथे नं० ११२ श्रीजगन्नाथपुरीवाले।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने निम्नलिखित दो माधोदास का वर्णन किया है।

१. माधवदास—भगवतरसिक जी के पिता

२. माधवदास—दादू जी के शिष्य।

"चौरासी वैष्णव की वार्ता" में एक माधोदास बेणीदास, दूसरे माधव भट्ट काश्मीरी, और तीसरे जगन्नाथपुरी वाले माधोदास का वर्णन है।

"दोसौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में एक माधोदास काबुली, दूसरे माधोदास कायथ सहारनपुरवाले और तीसरे माधोदास कपूर खत्री का वर्णन है।

---

(६७)

परमानन्द

दोहा ६५ (बिहारीदास नं० ६३ और परमानन्ददास नं० ४७ देखो)।

---

(६८)

मुकुन्द

दोहा ६६-६७—ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये घरद्वार सब छोड़ कर श्रीवृन्दावन में रहते थे। भक्तमाल में मुझे इनका नाम नहीं मिला। डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक मुकुन्द कवि का नाम लिखा है, जिनका समय सन् १६४८ लिखा है। "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" में एक मुकुन्ददास कायस्थ का चरित्र लिखा है, वह श्रीमद्भागवत की कथा अपूर्व कहते थे। एक मुकुन्ददास "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में भी लिखे हैं। प्रभु मुकुन्द की कविता मैंने कीर्तनों में देखी है।

---

(६९)

चतुरदास

दोहा ६८—ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि अन्त समय इन्होंने श्रीवृन्दावन बास पाया। राजा नागरीदास

जी ने अपने "पद प्रसङ्गमाला" में एक चतुरदास का, जिनका प्रसिद्ध नाम खोजी था, उल्लेख किया है, कि ये मारवाड़ के रहने वाले रामानुजीय सम्प्रदाय के वैष्णव थे और साषी में खोजी तथा विष्णु पद में चतुरदास नाम रखते थे। श्रीमद्भागवत की कथा कहते थे, इनका एक पद भी उद्धृत किया है। गद्य भक्त-माल में एक स्वामी चतुरदास का वर्णन किया है कि वे अह-र्निशि व्रजमण्डल में घूमा करते थे, सवेरे मङ्गला आरती श्रीवृन्दा-वन में गोविन्ददेव जी की, शृङ्गार आरती मथुरा में केशवदेव जी की, राजभोग नन्दगांव में करके श्रीगोवर्धन होते सन्ध्या को फिर श्रीवृन्दावन आजाते। इस ग्रन्थ में (भक्तमाल में) खोजी जी का चरित्र अलगही लिखा है कि उन्होंने अपने गुरू का जो ग्राम के कोड़े हो गए थे उद्धार किया था।

---

(७०)

चिन्तामणि

दोहा ६९. -ध्रुवदास जी के लेख से ये कवि जान पड़ते हैं भक्तमाल में इनका नाम मुझे नहीं मिला। सुप्रसिद्ध चिन्तामणि त्रिपाठी दूसरे थे। ये कोई महाशय व्रज के थे।

---

(७१)

नागर

दोहा ७०-ध्रुवदास जी ने इनका और हरिदास का एक ही दोहे में वर्णन किया है और दोनो को श्री हरिदास स्वामी का शिष्य लिखा है। (नागरीदास नं० ६२ देखो)।

---

(७२)

हरिदास

दोहा ७०-(नागर, नं० ७१ देखो)। हरिदास नाम के अनेक महात्मा हुए हैं। कई एक का वर्णन भक्तमाल में भी है और कई एक

Catalogus Catalogorum में भी लिखे हैं, परन्तु ये उन सभों से भिन्न जान पड़ते हैं। ये श्री स्वामी हरिदास जी के शिष्य थे।

(७३)

नवल

दोहा ७१–नवल और कल्यानी दोनो स्त्री थीं। ध्रुवदास जी के लेख से दोनों ही कवि जान पड़ती हैं। और कहीं मुझे इनका नाम नहीं मिला।

(७४)

कल्यानी

दोहा ७१–(नवल नं० ७३ देखो)

(७५)

वृन्दा अली

दोहा ७२–यह भी स्त्री थीं। इनका नाम भी मुझे और कहीं नहीं मिला।

(७६)

कल्यान

दोहा ७३–ध्रुवदास जी ने लिखा है कि कल्यान जी मण्डनिदास के साथ में श्री सङ्केत स्थान (बरसाने के पास) रास की बहुतेरी लीलाओं की रचना करते थे। "रास सर्वस्व" में लिखा है कि श्री नारायण भट्ट जी सङ्केत के रहने वाले रासराय और कल्याण राय दो ब्राह्मणों को बुलाकर उनसे रास लीला की रचना कराते थे। जान पड़ता है कि मण्डनिदास का उपनाम ही रासराय हो गया था। भक्तमाल में रूप गोस्वामी के शिष्य कल्यानदास का जो नाम लिखा है मेरे अनुमान में यह वही महानुभाव हैं।

(७७)

मण्डनिदास

दोहा ७३-(कल्याण नं० ७६ देखो)

---

(७८)

राधारमन

दोहा ७४-ध्रुवदास जी के लिखने से विदित होता है कि ये सान्तन कुण्ड पर, जो मथुरा से ढाई तीन कोस पर है, रहते थे। परन्तु श्री यमुना स्नान को नित्य आते थे। Catalogus Catalogorum में गोवर्धनलाल गोस्वामि के पुत्र राधारमण दास गोस्वामि का नाम मिलता है, परन्तु मेरे अनुमान में यह दोनों एक व्यक्ति नहीं थे।

---

(७९)

हरि हास*

दोहा ७५-ध्रुवदास जी ने इन्हें श्री राधाकुण्ड के निवासी लिखा है, और कहीं मुझे इनका पता नहीं मिला।

---

(८०)

गिरिधर सुहृद

दोहा ७६-ध्रुवदास जी के अनुसार ये बरसाने के रहने वाले थे। भक्तमाल में गिरिधर ग्वाल का वर्णन है मेरे अनुमान में वह और यह एक ही जान पड़ते हैं।

---

(८१)

नन्द दास

दोहा ७७, ७८, ७९-नन्ददास जी महान् कवि हुए हैं, इनको

---

* भूल से इस ग्रन्थ के मूल में (पृष्ठ ७) हरिदास नाम छप गया है ॥

पञ्चाध्याई में वही आनन्द आता है जो गीतगोविन्द में। इनके विषय में यह कहावत प्रसिद्ध है कि "और सब गढ़िया नन्ददास जड़िया"। इनकी गिनती अष्टछाप में है। ये श्री गोस्वामि विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। इनके विषय में "दो सौ बावन बैष्णव की वार्त्ता" में लिखा है कि ये पूर्व देश के रहने वाले थे, तुलसीदास जी के छोटे भाई थे, सनौढ़िया ब्राह्मण थे, बड़े पण्डित थे। एक समय श्रीद्वारिका के रणछोड़ जी के दर्शन को लोग इनके गांव से जा रहे थे। इन्होंने भी अपने जाने का आग्रह किया, तुलसीदास जी ने उन लोगों के साथ इन्हें कर दिया। रास्ते में साथ छूट गया, भटकते हुए ये सिंधनद में पहुंचे। वहां एक रूपवती खत्रानी पर मोहित हो गए, उसके घर का फेरा करने लगे। जब यह बात प्रसिद्ध हो गई तब उस स्त्री के घर वाले लोकनिन्दा के भय से नगर छोड़ श्री गोकुल की ओर चले, नन्ददास भी उसके पीछे हो लिए। गोकुल आ कर श्री गोस्वामी विट्ठलनाथ जी के दर्शन और उपदेश से चित्तवृत्ति पलट गई, शिष्य हो गए और वहीं रहने लगे। इन्होंने समग्र श्रीमद्भागवत का भाषानुवाद किया था। परन्तु मथुरा वासी कथा कहने वाले व्यासों के इस भय से कि अब मेरी कथा का आदर कौन करैगा, श्री गोशाईं जी के बड़े आग्रह पर केवल रास पञ्चाध्याई रख कर शेष ग्रन्थ श्री यमुना जी में डुबा दिया। आहा, जो कहीं वह पूरा ग्रन्थ होता तो भाषा में एक अपूर्व पदार्थ होता। नन्ददास जी की प्रशंसा सुन अकबर ने इन्हें बुलाया, और कुछ गाने को कहा। इन्होंने एक रास का पद सुनाया जिसके अन्त में था कि "नन्ददास ठाढ़े तहां निपट निकट" अकबर पीछे पड़ गया कि इस निपट निकट का भेद कहो। नन्ददास जी ने उसी समय वहीं प्राण त्याग कर दिया।

"भक्तमाल" में इन्हें रामपुर वाले चन्द्रहास का पुत्र लिखा है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने इनके बनाए इतने ग्रन्थों का नाम लिखा है:-नाममाला, अनेकार्थ, पञ्चाध्याई, रुक्मिणी मङ्गल, दशमस्कन्ध, दानलीला और मानलीला। इनके अतिरिक्त स्फुट पद बहुत बनाए हैं।

(८२)

सरसदास

दोहा ८०—ये श्री हरिदास स्वामी के शिष्यपरम्परा में थे। मिस्टर ग्राउस ने जो इनकी परम्परा दी है उसमें इनको नागरीदास जी (नं० ८३) का शिष्य लिखा है। ये सुकवि थे।

---

(८३)

नागरीदास

दोहा ८०—(नागरीदास नं० ६२ तथा सरसदास नं० ८२ देखो)।

---

(८४)

परमानन्द

दोहा ८१—(परमानन्ददास नं० ५७ देखो)। ध्रुवदास जी ने इनका और माधो (नं० ८५) का साथ ही वर्णन किया है और दोनों को सुकवि लिखा है।

---

(८५)

माधो

दोहा ८१—(परमानन्द नं० ८४ और माधो नं० ६६ देखो)

---

(८६)

सूरज

दोहा ८२, ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये और द्विज कल्यान दोनों कोई बड़े पद के मनुष्य थे। परन्तु सब बड़ाई छोड़ कर श्रीसंकेत स्थान में आकर रहते थे। "भक्तमाल" में एक प्रसिद्ध सूरदास जी और एक सूरदास मदनमोहन का नाम मिलता है, तथा द्विज कल्यान सकेत स्थान के इसी ग्रन्थ में नं० ७६ में वर्णित हो चुके हैं। भक्तमाल में एक कल्यानसिंह और लिखे हैं

(८७)

द्विज कल्यान

दोहा ८२—(सूरज नं० ८६ और कल्यान नं० ७६ देखो)। डाक्टर ग्रियर्सन ने एक कल्यान कवि सन् १६६९ के और दूसरे ब्रज के सन् १५७५ के लिखा है। इनको कृष्णदास पय-अहारी का शिष्य लिखा है।

(८८)

खड्गसेन

दोहा ८३—ये जाति के कायस्थ थे, ग्वालियर के रहने वाले थे। रासलीला में इनकी बड़ी रुचि थी। एक समय शरदपूर्णिमा के दिन रासलीला कराया था, उसमें एक पद बना कर गाया, उसको गाते गाते ऐसे प्रेममग्न हुए कि तत्क्षण प्राण त्याग कर दिया। राजा नागरीदास ने "पद प्रसङ्गमाला" में उस पद को उद्धृत किया है। गद्य भक्तमाल में लिखा है कि इन्होंने बहुत से ग्रन्थों से ढूंढ़कर एक ग्रंथ बनाया था जिसमें सब गोपी ग्वालों के मा बाप का नाम संग्रह किया था। डाक्टर ग्रियर्सन ने इनके बनाए दो ग्रन्थ और भी लिखे हैं-१ दानलीला २ दीपमालिका-चरित्र। "वैष्णव सर्वस्व" से विदित है कि ये श्रीहित हरिवंश जी के सम्प्रदायभुक्त थे।

(८९)

राघोदास

दोहा ८४—"दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता" में लिखा है कि ये सुप्रसिद्ध अष्टछाप वाले चत्रभुजदास जी के पुत्र थे। एक दिन गाठौली गांव की ओर से आते थे, वहां ब्रजवासियों को फाग खेलते देख एक धमार बनाया और ऐसे प्रेममग्न हुए कि तत्क्षण शरीर छोड़ दिया। राजा नागरीदास जी ने उस धमार को "पद प्रसङ्ग माला" में उद्धृत किया है और लिखा है कि राघोदास जी इस धमार को पूरी भी न कर पाए थे कि शरीर

छूट गया। तब उनकी स्त्री ने पहिले उसे पूरी की, पीछे उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की। भक्तमाल में दो राघवदास लिखे हैं-एक महंत थे और दूसरे अल्ह जी के शिष्य थे।

---

(९०)

अहिवरन

दोहा ८५—८६—इनका पता मुझे कहीं नहीं मिला। ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये बड़े महानुभाव थे और श्री वृन्दाबन बास करते थे।

---

(९१)

वृन्दाबन दासी

दोहा ८७—इनका पता मुझे कहीं नहीं मिला।

---

(९२)

मीराबाई

दोहा ८८, ८९, ९०, ९१-यह जोधपुर राज्यान्तर्गत मेरते के राव रत्नसेन की बेटी थीं, और परमवीर—परम वैष्णव जयमल की बहिन थीं। इनका बिवाह मेवाड़ के सुप्रसिद्ध राणा सांगा (संग्राम सिंह) के कुंवर भोजराज से हुआ था, जो कि कुंवर पने ही में मीरा को विधवा बना गए थे। कर्नल टाड ने राणा कुम्भ करण के मन्दिर के पास मीराबाई का मन्दिर देखकर भ्रम से मीरा जी को राणा कुम्भ की स्त्री लिखकर बड़ा गड़बड़ मचा दिया था, परन्तु इतिहास से यह वार्ता सर्वथा भ्रम पूर्ण सिद्ध हो गई।

मीरा बाई के नैहर का कुल वैष्णव था। मीरा भी बचपन ही से श्री गिरिधर लाल ठाकुर के रङ्ग में रँग गई थीं। जब इनका बिवाह हुआ तो इन्होंने श्री गिरिधर जी की भांवरें के समय बीच में कर लिया था। ससुराल वाले इनके शाक्त थे, यहां

इनकी वैष्णवता कर बड़ा विरोध होने लगा। तिसपर मीराबाई के पास सदा साधु समागम होने से और भी लोकनिन्दा होती थी। मीरा जी के पति मर ही चुके थे और राणा सांगा के पीछे राज्य में महा अराजकता फैल रही थी। मीरा जी के इन आचरणों से दुखी होकर उस समय के राणा ने इन्हें मारने के निमित्त बिष, तथा सर्प आदि के कई प्रयोग किए, परन्तु भगवत सदा रक्षा करते रहे। इन घटनाओं का प्रमाण मीरा जी के अनेक पदों से पाया जाता है। मीराबाई ससुराल वालों के उत्पीड़न से दुखी हो कर श्री वृन्दाबन चली आईं। यहां वह जीव गोशाईं से मिली थीं। कहते हैं कि यहीं इनसे मिलने तानसेन के साथ अकबर भी आए थे। श्री वृन्दाबन से मीराबाई द्वारिका जी चली गईं और श्री रणछोड़ जी के प्रेम में मग्न हो गईं। इधर राणा ने राज्य में अनेक उत्पात होता देख, मीरा का कोप समझ इनको लौटा लाने के लिये ब्राह्मणों को भेजा। ब्राह्मण लोग द्वारिका जी जाकर प्राण देने के लिये धरना दे बैठे। मीराबाई अत्यन्त दुखी हुईं और वहीं सबके देखते देखते भगवत स्वरूप में लय हो गईं। अब तक रणछोड़ जी के साथ मीराबाई की सेवा होती है। इनका ऐतिहासिक चरित्र जोधपुर के मुंशी देवीप्रसाद ने बहुत अच्छा लिखा है। अंग्रेज़ ऐतिहासिकों ने लिखा है कि इनका बनाया ग्रंथ "राग गोविन्द" प्रसिद्ध है, तथा इन्होने "गीत गोविन्द" की भी टीका की थी, परन्तु इन ग्रन्थों का कहीं पता नहीं है। हां, इनके बनाए हज़ारों पद देश भर में प्रसिद्ध हैं।

बाबू अक्षय कुमार दत्त ने "भारतबर्षीय उपासक सम्प्रदाय" में इन्हें श्रीमद्बल्लभाचार्य्य जी की अनुगामिनी लिखा है। परन्तु ऐसा नहीं है। "चौरासी वार्त्ता' में इनके पुरोहित रामदास का वर्णन है कि श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जी से विमुख होने के कारण उन्होंने पुरोहिताई छोड़ दी। एक पद में रैदास का नाम आजाने से कोई कोई रैदास की चेली होने का भी सन्देह करते हैं। जीव गोशाईं के दर्शन के आने से गौड़िया सम्प्रदाय की होने का भी सन्देह होता है और मारवाड़ की ओर रामानन्दियों

के अधिक प्राबल्य से यह भी सम्भव है कि यह रामानन्दी रही हों।

चित्तौरस्थित इनका मन्दिर मूर्त्तिशून्य रहने के कारण मुझे शङ्का हुई कि इनके सेव्य ठाकुर श्री गिरिधर जी कहां हैं? ढूंढ़ते ढूंढ़ते पता लगा कि राज्य जयपुर की प्राचीन राजधानी आमेर में जो जगत शिरोमणि जी ठाकुर हैं, वही मीरा जी के सेव्य श्री गिरिधर जी हैं। मैं गतवर्ष स्वयं उनके दर्शन को गया और वहां जाकर पूछने पर पता लगा कि मीरा जी के ठाकुर गिरिधर जी यही हैं। जब राजा मानसिंह ने चित्तौर विजय किया था तब इन्हें लाए थे, और जब उनके पुत्र कुंवर जगत सिंह उनके सामने ही मर गए थे तब इनकी स्थापना यहां पर जगत शिरोमणि जी नाम रखकर की गई। पहिले केवल अकेली भगवान की द्विभुज मूर्त्ति श्याम प्रस्तर की थी। थोड़े दिन हुए कि धूम धाम से बिवाह करके इनके पास श्री स्वामिनी जी की मूर्त्ति भी पधराई गई है। प्रति वर्ष ठाकुर जी गनगौर के उत्सव पर राज्य प्रासाद में धूम धाम से जाते हैं। मन्दिर नौलाख की लागत से बहुत आलीशान बना है। ढूंढ़ते ढूंढ़ते मुझे एक लेख श्री गरुड़ जी की सङ्गमर्मर की मूर्त्ति की चौकी पर खुदा मिला जो इस प्रकार है—

"सं० १६११ फागु सुदी सातां भाय संघ का (?) सुत्रधार वोहीथ ईसर की से"

दूसरा एक लेख उन्हीं गरुड़ जी के चौखट पर बाहर को मिला जो इस प्रकार है—

"संवत १७१९ मि० सावन सुदी ८...... दास रो बेटा...... दुबे नैण"

प्रथम लेख से यह अनुमान होता है कि यह लेख मीराबाई के मूर्त्ति स्थापन के समय का है। क्योंकि जिन जगत सिंह के स्मारक स्वरूप इनका नाम जगत शिरोमणि हुआ उनका उस समय कहीं पता भी न था, और दूसरा लेख उनके यहां (आमेर में) स्थापित होने के समय का विदित होता है।

(९३)

गङ्गा

दोहा ९२—गङ्गा और यमुना दोनो ही "वैष्णव सर्वस्व" के लेखानुसार श्री गोस्वामी हित हरिवंश जी की शिष्य थीं। ध्रुवदास जी के लेख से दोनो ही कवि जान पड़ती हैं।

---

(९४)

यमुना

दोहा ९२— (गङ्गा नं० ९३ देखो)।

---

(९५)

कुम्भन दास

दोहा ९३—कुम्भन दास जी गोरवा ब्राह्मण थे, श्री गोवर्धन के पास जमुनावते गांव में रहते थे, श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य थे और अष्टछाप में इनकी गिनती थी। इनका चरित्र "चौरासी वार्ता" में लिखा है। इनके सात बेटे थे जिनमें चत्रभुज दास बड़े कवि थे, अष्टछाप में गिने गए थे; और पौत्र राघवदास जी भी अच्छे कवि थे। ये अत्यन्त ही दरिद्रावस्थापन्न थे, राजा मानसिंह ने इन्हें बहुत कुछ देना चाहा था, परन्तु इन्होंने कुछ भी ग्रहण नहीं किया। एक समय श्री गोसाईं विट्ठलनाथ जी ने चाहा कि इन्हें अपने साथ विदेश लिवा ले जांय तो कुछ इन्हें प्राप्ति हो जायगी। परन्तु एक ही दिन में इन्हें श्रीनाथ जी के बिछुड़ने का ऐसा ताप हुआ कि यह सहन न कर सके। इन्हें गोसाईं जी ने लौटा दिया। एक समय अकबर ने इन्हें फतेहपुर सीकरी में बुलाया था। बड़ा आदर सन्मान करके कहा कि आप कुछ गाइए। तब इन्होंने यह पद गाया था—

"भक्तन को कहा सीकरी सों काम।
आवत जात पनहियां टूटी बिसर गयो हरिनाम॥
जिनको मुख देखत दुख उपजत तिनको करनी पड़ी सलाम।
कुम्भनदास लाल गिरधर बिनु और सबै बेकाम॥"

पंडित मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या ने "श्री गोवर्धननाथ जी की प्राकट्य वार्त्ता" में लिखा है कि जब श्री वल्लभाचार्य्य महाप्रभु ने श्री नाथ जी की सेवा पधराई थी तब इन्हें कीर्तनियां नियुक्त किया था।

ये बहुत वृद्ध होकर मरे थे।

---

(९६)

कृष्ण दास

दोहा ९३—ये श्रीवल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य थे, अष्टछाप में इनकी भी गणना है। "चैारासी वैष्णवों की वार्त्ता" में इनका चरित्र विशद रूप से लिखा है, उसमें लिखी हुई बहुत सी बातों का उल्लेख भक्तमाल तथा नागरीदास के "पदप्रसङ्गमाला" में भी है। वार्त्ता के अनुसार ये जाति के शूद्र थे। श्रीनाथ जी के मन्दिर के अधिकारी अर्थात् सर्वप्रधान प्रबन्धकर्ता थे। पहिले श्रीनाथ जी की सेवा बङ्गाली लोग करते थे, परन्तु वह सब अन्तः शाक्त थे, उन सभों को कृष्णदास जी ने निकाला। सूरदास जी से श्रैार इनसे सदा लाग डांट रहती थी। जो पद कृष्णदास जी बनाकर सुनाते उसीमें सूरदास जी अपनी कविता की छाया दिखला देते। एक दिन कृष्णदास जी ने एक नवीन भाव का भगवत् के बन से लैाटने के समय का पद बड़े परिश्रम से बनाया, परन्तु चौथा तुक सारी रात परिश्रम करके भी न बना सके, झपकी लगी तो भगवत् ने तुरन्त उसे लिख दिया (डाक्तर ग्रिअर्सन ने लिखा है कि श्रीवल्लभाचार्य्य ने लिख दिया)। सवेरे उठते ही उसे देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए श्रैार सूरदास जी के‍ा जा दिखाया। वह भी अक्षर पहिचान गए श्रैार बोले भाई तुम्हारी हिमायत बड़े घर से हुई है। एक समय कृष्णदास जी किसी काम से दिल्ली आए थे। वहां एक वेश्या का नाच देख मोहित हो गए श्रैार जी में आया कि इसका नृत्य श्रीनाथ जी के‍ा दिखाना चाहिए। उसे बहुत द्रव्य दे श्री जी द्वार लाए। वह श्रीनाथ जी के सामने नाचती गाती ऐसी प्रेमरस मानी हो गई कि वहीं शरीर त्याग

दिया। कृष्णदास जी से और गङ्गाबाई खत्रानी से, जो कविता में अपनी छाप श्रीविट्ठल गिरिधरन रखती थीं, अत्यन्त स्नेह था। इसपर श्रीगोस्वामी विट्ठलनाथ जी ने कुछ असन्तोष प्रकाश किया। इसपर चिढ़कर कृष्णदास जी ने श्रीगोशाईं जी की श्रीजी द्वार में डेवढ़ी बन्द कर दी। श्रीगोशाईं जी छ महीना तक श्रीगोवर्धन के नीचे परासोली गांव में रहे, वहीं से अपने विरह की विज्ञप्ति लिखकर फूल की माला में छिपाकर श्रीनाथ जी के पास भेजा करते थे। यह सब विज्ञप्तियां अत्यन्त हृदयग्राहिणी हैं, बम्बई में छप गई हैं। श्रीगोशाईं जी के इस कष्ट का समाचार जब राजा बीरबल ने सुना, तो ५०० सवार भेज कृष्णदास को क़ैद कर दिया। श्रीगोशाईं जी ने यह सुनते ही अन्न जल छोड़ दिया कि मेरे पिता के शिष्य को यह कष्ट? बीरबल को जब यह समाचार मिला तो उन्होंने कृष्णदास जी को कैद से छोड़ श्रीगोशाईं जी के पास भेज दिया। गोशाईं जी इनको आता सुनकर आगे से बढ़-कर मिले, कृष्णदास जी चरणों पर गिर पड़े, गोशाईं जी ने फिर इन्हें अधिकार की सेवा सौंपी, कृष्णदास जी कूप में गिरकर मरे।

डाक्टर ग्रियर्सन ने भ्रमवश इन्हें कृष्णदास पयहारी लिखा है। वह रामानन्दी सम्प्रदाय के थे और उनके शिष्य अग्रदास आदि थे।

"भक्तमाल" में इनके अतिरिक्त छ कृष्णदास और भी वर्णित हैं जिनमें एक कृष्णदास पयअहारी और एक "चैतन्य चरिता-मृत" (बंगला) के कर्ता कृष्णदास भी हैं।

---

(९७)

पूरनमल

दोहा ९४–ध्रुवदास जी ने एक ही दोहे में पूरनमल, जसवन्त जी, भोपति, गोविन्ददास और हरिदास का वर्णन किया है और सभों को हरिदास (श्री स्वामी हरिदास) का सेवक लिखा है। इससे ये सब महानुभाव श्री वृन्दावन के विदित होते हैं।

“भक्तमाल” में एक [illegible]रनदास का चरित्र है और उनको कवि भी लिखा है।

एक पूरनमल खत्री श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य थे जिन्होंने श्रीनाथ जी का मन्दिर श्रीगोवर्धन पर बनवाया था।

---

(९८)

जसवन्त जी

दोहा ९४—(पूरनमल नं० ९७ देखो)। “भक्तमाल” में इन्हें राठौर क्षत्री और श्री वृन्दावनवासी लिखा है।

---

(९९)

भोपति

दोहा ९४–(पूरनमल नं० ९७ देखो)।

---

(१००)

गोविन्ददास

दोहा ९४–(पूरनमल नं० ९७ देखो)।

एक गोविन्ददास नाभा जी के शिष्य थे, पहिले पहिल नाभा-जी ने इन्होंको “भक्तमाल” पढ़ाया था।

---

(१०१)

हरीदास

दोहा ९४—(पूरनमल नं० ९७ देखो)।

“ भक्तमाल ” में निम्न लिखित कई हरिदास का चरित्र वर्णित है–

१–राजा हरिदास, पाटन नगर के, जाति राजपूत।

२–योगानन्द जी के वंशज, रामोपासक हरिदास।

३–जाति के बनिए, काशी के रहने वाले, श्री वृन्दावनस्थ श्री गोस्वामि सुन्दरलाल के शिष्य।

४-श्री हरिदास स्वामी (नं० १०)।

चौरासी और दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ताओं में भी कई हरिदास का वर्णन है।

---

(१०२)

परमानन्द दास

दोहा ९५-ये कनौजिया ब्राह्मण थे, श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे, अष्टछाप में इनकी भी गिनती थी। पहिले स्वयं स्वामी थे, लोगों को चेला बनाते थे, पीछे श्री वल्लभाचार्य के दर्शन से उनके शिष्य हो गए। इन्होंने बहुत पद बनाए हैं, इसीसे इनका नाम श्री गोशाईं जी ने भी सूरदास जी की भांति परमानन्द सागर रक्खा था। इनके एक पद पर श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ऐसे प्रेममग्न हो गए थे कि कई दिनों तक देहानुसन्धान रहित रहे। यह पद "पद प्रसङ्गमाला" में संगृहीत है। इनका घर कनौज था। वहां श्री महाप्रभु जी सूरदासादि अपने शिष्यों के साथ गए थे।

---

(१०३)

सूरदास

दोहा ९५-भाषाकविकुलमुकुट माणिक्य श्री सूरदास जी का नाम कौन नहीं जानता? ये भी श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जीके शिष्य और अष्टछाप में सर्वप्रधान थे। इनका जीवनचरित्र मैं विस्तार पूर्वक " नागरीप्रचारिणी पत्रिका " में लिख चुका हूं। इसलिये यहां फिर से नहीं लिखता। इनके बनाए सवा लाख पद हैं। Catalogus Catalogorum में सूरदास रचित " हरिवंश टीका " का नाम लिखा है।

---

(१०४)

माधोदास बरसाने वाले

दोहा ९६-९७—(माधो नं० ६६ देखो)। ध्रुवदास जी ने

इन्हें और रामदास (नं० १०५) को एक साथ ही बरसाने के रहनेवाले और सुकवि लिखा है।

---

(१०५)

रामदास बरसाने वाले

दोहा ९६-९७—(माधो दास नं० १०४ देखो)।

"भक्तमाल" में दो रामदास का वर्णन है। एक ब्रज के रहने वाले। इन्होंने अपनी लड़की के विवाह की सामिग्री साधुओं को खिला दी थी। दूसरे श्रीद्वारिका क्षेत्र के रहने वाले।

"चौरासी वार्त्ता" में चार रामदास लिखे हैं। एक सारस्वत ब्राह्मण जो साधु सेवा के कारण सदा ऋणग्रस्त रहते थे। दूसरे सांचोरा ब्राह्मण द्वारिका जी के रहनेवाले। तीसरे मीराबाई के पुरोहित, और चौथे चौहान राजपूत श्री गोवर्धन के रहने वाले, जिनको श्रीमहाप्रभु जी ने श्रीनाथ जी की सेवा सौंपी थी।

"दो सौ बावन वार्त्ता" में एक रामदास खमाच के रहनेवाले और दूसरे विरक्त श्रीगोवर्धन के रहनेवाले लिखे हैं। मेरे अनुमान से ये बरसाने वाले रामदास वल्लभीय सम्प्रदाय के हों तो आश्चर्य नहीं, इनके बनाए पद मन्दिरों में गाए जाते हैं।

---

(१०६)

सेन

दोहा ९८—ये जाति के नाई थे, रामानन्द जी के शिष्य थे, बान्धवगढ़ (रीवां) के राजा के यहां नापितकर्म करते थे। एक दिन साधुसेवा में इन्हें देर हो गई तो भगवान स्वयं इनका रूप धर राजा की सेवा कर आए। जब राजा को यह भेद विदित हुआ तब वह इनका शिष्य हो गया। कई पीढ़ी तक राजवंश के लोग सेनवंश के शिष्य होते रहे। सेनपन्थ एक मत ही चल गया। इनकी कविता सिक्खों के ग्रन्थ साहब में भी संगृहीत है।

(१०७)

नामदेव

दोहा ९८—ये जाति के छीपी, रहने वाले पण्डरपुर (दक्षिण) के थे। ये विष्णुस्वामी के सम्प्रदाय के आचार्यों में श्रीवल्लभाचार्य्य महाप्रभु के पहिले हुए हैं। इनके गुरु ज्ञानदेव जी थे, और शिष्य त्रिलोचनदेव। इनके नाना प्रसिद्ध भक्त बामदेव थे। बचपन ही से इन्हें भगवद्भक्ति पर रुचि थी। खेल भी भगवत सम्बन्धीय ही खेला करते थे। होते होते इनकी ऐसी प्रसिद्धि हुई कि उस समय के बादशाह ने इनको बुलाकर इनकी परीक्षा ली। इनके माहात्म्य की अनेक बातें प्रसिद्ध हैं, मरी गाय का जिलाना, जड़ाऊ पलङ्ग का नदी में से निकालना, श्रीपण्डरनाथ जी के मन्दिर के द्वार को दक्षिण की ओर घुमा देना, आदि, आदि। एक दिन इनके घर में आग लगी। ये और भी बची बचाई वस्तुएं लेकर आग में डालने लगे और कहने लगे कि इसे भी अङ्गीकार कीजिए। इस पर भगवान ऐसे प्रसन्न हुए कि स्वयं आकर इनका छप्पर छागए। ये सुकवि थे, इनकी कविता सिक्खों के ग्रन्थ साहब में भी संग्रहीत है। राजा नागरीदास जी ने इनके कई पद अपने "पदप्रसङ्ग-माला" ग्रन्थ में संग्रह किया है। उनमें से एक का अन्तिम पद यह है कि "कहत नामदेव सुनौ कबीर। चरन गहौ येई रघुबीर"। इससे यह विदित होता है कि ये कबीर के समकालीन थे।

---

(१०८)

पीपा

दोहा ९९—पीपा, धना, रैदास और कबीर का एकही दोहे में वर्णन किया है। पीपा जी जाति के राजपूत गागरौनगढ़ के राजा थे। पहिले शाक्त थे, पीछे अपनी छोटी रानी सीता के के साथ रामानन्द स्वामी के शिष्य होकर राज पाट सब छोड़ दिया। वैरागी और वैरागिनी वेष में रामानन्द जी के साथ द्वारिका जी गए। लौटती समय सीता को कई पठान दस्यु हरण

करके ले चले, भगवान ने स्वयं आकर रक्षा की। निदान ऐसे ही अनेक अद्‌भुत और अलौकिक उपाख्यान इनके विषय में प्रसिद्ध हैं। ये बड़े उदार थे और सुकवि भी थे। सीता के पातिव्रत्य और साधुसेवा के भी अनेक उपाख्यान भक्तमाल में लिखे हैं।

---

(१०९)

धना

दोहा ९९—ये जाति के जाट थे, रामानन्द स्वामी के शिष्य थे। इनके विषय में भी अनेक अलौकिक कथा प्रसिद्ध हैं। इनकी कविता सिक्खों के ग्रन्थ साहब में संगृहीत है।

---

(११०)

रैदास

दोहा ९९—ये जाति के चमार थे। रामानन्द जी के शिष्य थे। काशी के रहनेवाले थे। चमार होकर इनकी भगवद्भक्ति और मान को देखकर ब्राह्मणों और उस समय के राजा ने अनेक उपद्रव किए। परन्तु इन्होंने अपना अलौकिक शक्ति द्वारा सबको परास्त किया और सर्वमान्य हुए। ये अच्छे सुकवि थे, इनकी कविता सिक्खों के ग्रंथसाहब में संगृहीत है। इनके कारण चमार ऐसी जाति भी आज तक गौरव के साथ अपना नाम रैदासी बतलाती है। इनके वंश के लोग अभी भी काशी में हैं जो अपनी जूता बनाने की वृत्ति करते हैं।

---

(१११)

कबीर

दोहा ९९—कबीर वास्तव में किस जाति के थे और किस कुल में जन्मे थे यह ठीक विदित नहीं। इनके जन्म की कथा यों प्रसिद्ध है कि एक दिन नीमा नाम की एक जुलाहिन अपने पति नूरो के साथ एक विवाहोत्सव में गई थी। मार्ग में लहरतारा

नामक झील में, जो काशी के पास ही है, पानी पीने गई। वहां एक कमल के पत्ते पर एक सद्यःजात शिशु बहता हुआ पाया। नीमा उसे उठा लाई और बड़े प्रेम से पाला। लहरतारा झील के तट पर अब तक एक छोटी सी मढ़ी उक्त स्थान पर वर्तमान है जो कि कबीरपन्थियों में परम पूज्य स्थान माना जाता है। कबीर रामानन्द स्वामी के शिष्यों में मुख्य थे। इनके उपदेश से उस समय धर्म सम्बन्धीय घोर विप्लव इस देश में उपस्थित हुआ था, जिसका वर्णन इतिहासों में भी पाया जाता है। इनकी परीक्षा उस समय के दिल्लीश्वर सिकन्दर लोदी ने ली थी। कहते हैं कि ये तीन सौ वर्ष तक जीवित रहे थे और मरने के पीछे इनके हिन्दू और मुसलमान शिष्यों में जलाने और गाड़ने के लिये घोर झगड़ा हुआ था। इनकी कविता सारे भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। इनके बनाए अनेक ग्रन्थ हैं। इनका चरित्र इस स्थान पर संक्षेप से लिखना असम्भव जानकर आगे के लिये छोड़ते हैं। इनके पुत्र का नाम कमाल था।

---

(११२)

माधोदास जगन्नाथपुरी वाले

दोहा १००,१०१—भक्तमाल के अनुसार ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, श्री जगदीशपुरी के रहने वाले थे, परम भगवद्भक्त थे, श्री जगन्नाथ जी स्वयं इनके भोजन का थाल लाए थे, तथा जाड़े में कांपता देखकर दुलाई उढ़ा दी थी, ऐसी ही अनेक वार्ता इनके विषय में अलौकिक प्रसिद्ध हैं। ये बड़े सुन्दर कवि थे और प्रायः कविता में श्री जगन्नाथ जी का नाम रखते थे, जैसे—

"श्री जगन्नाथराय चिरजीयो सबको भलो मनायो
बाढ़ै वंशानन्द बाबा को माधोदास जस गायो॥"

ये श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के समसामयिक थे। माधवदास जी संस्कृत के भी पण्डित थे और बड़े बड़े वादियों को परास्त किया था।

(११३)

विल्वमङ्गल

दोहा १०२—ये जाति के ब्राह्मण थे, दक्षिण देश में कृष्णवेणा नदी के तीर के रहने वाले थे, चिन्तामणिनाम्नी एक वेश्या पर आसक्त थे, पिता के श्राद्ध के दिन प्रेमिका के यहां जाने में रात हो गई, वह नदी पार रहती थी, आप नदी में कूद पड़े और एक शव के सहारे पार पहुंचे, वहां उसके घर का द्वार बन्द पाया, एक सर्प को रस्सी समझ उसके सहारे भीतर पहुंचे। वेश्या ने इनको इस आसक्ति पर धिक्कारा, इसपर इन्हें ऐसी ग्लानि आई कि घर छोड़ विरक्त होकर निकल पड़े, रास्ते में फिर एक सुन्दरी को देखकर मोहित हो गए परन्तु फिर जो ज्ञान आया तो सब उपद्रव की जड़ आंखों को समझ कर आंख फोड़ ली। भगवान ने एक दिन इन्हें कूप से गिरते हुए हाथ पकड़ कर बचाया। ये संस्कृत के बड़े पण्डित थे कृष्णकर्णामृत, गोविन्द माधव आदि कई एक संस्कृत के ग्रन्थ बनाए हैं। श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के यही दीक्षा गुरु थे।

---

(११४)

रामानन्द

दोहा १०३—रामानन्द जी, अक्रूद, सोभू, हरिव्यास और छीतस्वामी का एक दोहे में ध्रुवदास जी ने वर्णन किया है।

"भक्तमाल" के लेख से विदित होता है कि ये दक्षिण देश के रहनेवाले थे और एक सन्यासी के चेले थे। एक दिन रामानुज स्वामी की गद्दी के महन्त राघवानन्द स्वामी के दर्शन को गए। उन्होंने कहा कि तुम्हारी आयु अब बहुत कम रही है, जो कुछ करना हो करलो। रामानन्द जी राघवानन्द जी के चेले हो गए। उन्होंने उनकी मृत्यु के समय उन्हें ब्रह्मांड में प्राण चढ़ाकर समाधिस्थ कर दिया। अब मृत्यु का समय टल गया तब फिर प्राणवायु उतार कर बहुत दिन तक जीने का वरदान दिया। रामानन्द जी कुछ दिनों तक गुरु की सेवा करने के उपरान्त श्री बदरिकाश्रम

यात्रा करके काशी में पञ्चगङ्गा घाट पर आकर कुछ दिनों तक रहे। जब लौट कर गुरु के पास गए तब वहां लोगों ने इन्हें पंक्ति में न लिया, क्योंकि ये रामानुजीय कड़े आचार का पालन नहीं कर सके थे। तब गुरु ने आज्ञा दी कि तुम अपना अलग पन्थ चलाओ। इसीके अनुसार इन्होंने रामावत या रामानन्दी मत चलाया। नाभा जी ने स्वयं लिखा है कि ये बहुत दिनों तक जीवित रहे थे।

"भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय" तथा "भक्तमाल" के अनुसार रामानुजाचार्य के शिष्य देवाचार्य, उनके हरिनन्द, उनके राघवानन्द और उनके रामानन्द थे। रामानुजाचार्य का वर्तमान होना सम्वत ११५० में माना जाता है और रामानन्द जी के शिष्य कबीर जी का वर्तमान होना सम्वत १५४५ में सिद्ध है। तथाच यह भी ऊपर लिखा गया है कि इन्होंने बड़ी अवस्था पाई थी। अतः इनका समय विक्रमीय सम्वत १४०० से १५०० के भीतर मानना असङ्गत नहीं जान पड़ता।

"भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय" के अनुसार रामानन्द जी के १२ प्रधान शिष्यों के यह नाम हैं—आशानन्द, कबीर, रैदास, पीपा, सुरसुरानन्द, सुखानन्द, भावानन्द, धना, सेन, महानन्द, परमानन्द और श्रियानन्द। परन्तु "भक्तमाल" के अनुसार ये १२ शिष्य थे—अनन्तानन्द, कबीर, सुखानन्द, सुरसुरानन्द, पद्मावत, (वा पद्मनाभ), नरहरि, पीपा, भावानन्द, रैदास, धना, सेन, और सुरसुरी* और भी इनके बहुत शिष्य थे। रामानन्द जी और उनके शिष्यों ने एक नवीन पथ प्रचलित किया। "जाति पांति पूछै नहिं कोई। हरिको भजै सो हरिका होई" इसे प्रत्यक्ष कर दिखाया। राजपुताने से लेकर इस देश तक इनके मत का बड़ा प्राबल्य था। इतिहासों के देखने से बिदित होता है कि इस समय धर्मविषयक घोर विप्लव उपस्थित हुआ था। इनकी प्रधान गद्दी जयपुर राज्यान्तर्गत गलता स्थान में है। वह स्थान अत्यन्त रम्य है और अब वहां बड़े बड़े कई मन्दिर वर्तमान हैं, जिनमें श्री सीताराम की मूर्ति विराजमान हैं।

---

* यह सुरसरी सुरसुरानन्द की स्त्री थी।

रामानन्द जी स्वयं कवि थे। ग्रन्थ तो कोई उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु स्फुट कविता लोकप्रसिद्ध हैं। परन्तु इनके शिष्यों ने इस देश में भाषा कविता ग्रैार वैष्णव धर्म का बहुत कुछ प्रचार किया। मैंने रामानन्द कृत एक रामरक्षास्तोत्र भाषा में देखा है। परन्तु यह निश्चय नहीं कर सकता कि यह यही रामानन्द थे या दूसरे। Catalogus Catalogorum में बहुत से रामानन्द ग्रैार उनके बनाए ग्रन्थों के नाम हैं परन्तु यह ठीक पता नहीं लगता कि इनका बनाया कौन ग्रन्थ है। मेरे अनुमान में रामानन्द कृत "रामानन्दीय वेदान्त" नामक ग्रंथ इनका बनाया हो तो आश्चर्य नहीं।

---

(११५)

अङ्गद

दोहा १०३—(रामानन्द नं० ११४ देखिए)।

"भक्तमाल" की टीका में लिखा है कि ये रायसेनगढ़ के राजा सिलहद्दीन के चाचा थे। एक समय राजा की ग्रोर से शत्रु से लड़ने गए थे। वहां उन्हें एक हीरे का ताज मिला जिसमें ग्रैार हीरों के साथ एक हीरा बहुमूल्य जड़ा था। अङ्गद जी ने उसे श्रीजगन्नाथ जी की भेट की इच्छा से पगड़ी में रख लिया। राजा ने उसको बहुत चाहा, परन्तु उन्होंने न दिया। राजा ने विष दिलाया, परन्तु वह ग्रमृत हो गया। राजा का ऐसा ग्राग्रह जान अङ्गद जी उस नगर को छोड़ जगन्नाथपुरी को चले। परन्तु मार्ग में राजा के सिपाहियों ने जा पकड़ा। तब अङ्गद जी ने श्रीजगन्नाथ जी का ध्यान करके उस हीरे को एक तालाब में फेंक दिया। परन्तु भगवान ने ऊपर से ही लोक लिया ग्रैार ग्रपनी दक्षिण भुजा पर धारण किया। कहते हैं कि ग्रब तक वह हीरा श्री जगन्नाथराय जी के श्री ग्रङ्ग पर है। इनकी कविता नानक जी के "ग्रन्थसाहब" में संग्रहीत है।

---

(११६)

सोभू

दोहा १०३–(रामानन्द नं० ११४ तथा हरिव्यास नं० ११७ देखिए)।

"भक्तमाल" की टीका में इन्हें उड़िया देश के रहने वाले ब्राह्मण लिखा है। कहते हैं कि इनका मन्दिर अब तक उड़िया देश में अगाधरी के पास वर्तमान है। ये हरिव्यास देव (नं० ११७) के शिष्य थे। इनसे कई शाखाएं चलीं। दो शाखा इनके भाई आत्माराम के शिष्य सन्तदास और माधोदास की चली। इन शाखाओं का विशेष वर्णन हरिव्यास देव (नं० ११७) के वर्णन में लिखा जायगा।

---

(११७)

हरिव्यास

दोहा १०३ (रामानन्द नं० ११४ देखिए)

ये निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य हुए हैं। इनकी गुरु परम्परा यों है—श्री निम्बादित्य, श्री निवासाचार्य, विश्वाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य, श्री विलासाचार्य, स्वरूपाचार्य, माधवाचार्य, बलभद्राचार्य, पद्माचार्य, श्यामाचार्य, गोपालाचार्य, कृपाचार्य, देवाचार्य, सुन्दर भट्ट, पद्मनाभ भट्ट, उपेन्द्र भट्ट, रामचन्द्र भट्ट, वामन भट्ट, कृष्ण भट्ट, पद्माकर भट्ट, श्रवण* भट्ट, भूरि भट्ट, माधव भट्ट, श्याम भट्ट, गोपाल भट्ट, बलभद्र भट्ट, गोपीनाथ भट्ट, केशव भट्ट, गङ्गल भट्ट, केशव काश्मीरि भट्ट, श्री भट्ट, और हरिव्यास देव।

हरिव्यास देव से पांच शाखा चलीं, यथा—

प्रथम शाखा—शोभूराम, कर्णहरदेव (वा कन्हरदास), मथुरेश, नरहरिदास, प्रह्लाददास।

द्वितीय शाखा—कर्णहरिदेव, परमानन्ददेव, नागजी, मोहन देव, आत्माराम, नारायणदास, भगवान दास, गिरिधारीदास, गोपालदास।

तृतीय शाखा—शोभूराम, मथुरेश देव, बदरीश देव, जयरामदेव, कृष्ण देव, धर्मदास।

चतुर्थ शाखा—व्यास देव, परशुराम, हित हरिवंश, हित नारायण, हित वृन्दावन, हित गोविन्द।

---

* श्रवण भट्ट का नाम "वैष्णव सर्वस्व" में नहीं है।

पञ्चम शाखा—(इसके चलाने वाले हरिव्यास जी के पहिले के कोई महात्मा थे)। प्राशधीर, हरिदास स्वामी, विट्ठल विपुल, बिहारिनिदास, रसिकदेव, पीताम्बर देव, गोवर्धन देव, नरोत्तमदेव रसिकदेव जी के दूसरे शिष्य ललितकिशोरी उनके मौनीदास* ।

(यह गुरु परम्परा "वैष्णवसर्वस्व" के अनुसार लिखी गई है)।

इन हरिव्यास जी के विषय में प्रायः विद्वानों ने धोखा खाया है। राजा प्रतापसिंह अपनी गद्य "भक्तमाल" की टीका में हरिवंश जी के शिष्य ओड़छे वाले व्यास जी को ही हरिव्यास लिख गए हैं और डाकर ग्रिअर्सन ने ओड़छेवाले व्यास जी, और हित हरिवंश जी के पिता व्यास जी और इन हरिव्यास जी तीनों को एकही माना है। अस्तु।

मूल "भक्तमाल" और प्रियादासी टीका में इनका चरित्र यों लिखा है कि एक समय ये चरथावल ग्राम के एक बाग़ में टिके थे। वहां एक देवी का मन्दिर था। उसमें किसीने बकरे का बलिदान दिया था। इन्हें ऐसी ग्लानि हुई कि उसदिन अन्नजल कुछ न किया। देवी से भगवद्भक्त का यह कष्ट न देखा गया। तुरन्त प्रगट हुईं और हरिव्यास जी से क्षमा प्रार्थना कर गुरुमन्त्र लिया।

Catalogus Catalogorum में कई हरिव्यास लिखे हैं जिनमें से इनको श्री भट्ट का शिष्य और परशुराम का गुरु लिखा है। परन्तु इनका बनाया कोई ग्रंथ नहीं लिखा है। पर एक हरिव्यास मुनि लिखा है और उनकी बनाई श्री निम्बादित्य रचित "दश श्लोकी" टीका का उल्लेख किया है। सम्भवतः यह टीकाकार यही हरिव्यास जी होंगे।

---

* मुझे एक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तक में दूसरे ही प्रकार से यह परम्परा मिली है जो लगभग मिस्टर ग्राउस से मिलती है। मिस्टर ग्राउस ने नरहरदेव के पहिले नागरीदास, सरसदास और नवलदास, तीन नाम और लिखे हैं।

(११८)

छीतस्वामी

दोहा १०३ (रामानन्द नं० ११४ देखिए)।

छीतस्वामी श्रीगोस्वामी विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। बड़े कवि थे। इनकी गणना अष्टछाप में थी। "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" तथा राजा नागरीदास के "पद प्रसङ्ग माला" में इनका चरित्र यों लिखा है कि ये मथुरिया चौबे थे। पहिले बड़े गुण्डे थे, लोगों से छेड़ छाड़ किया करते थे। श्री गोशाईं जी की प्रशंसा सुन सुन ईर्षावश जल भुन जाते थे, एक दिन तङ्ग करने की इच्छा से एक खोखले नारियल में राख भर कर और एक खोटा रुपया लेकर गोशाईं जी के पास आए और भेट किया। गोशाईं जी भेद समझ कर बोले कि छीतस्वामी जी, नारियल फोड़कर गिरी वैष्णवों को बाँट दो। छीतस्वामी ने जो नारियल फोड़ा तो भीतर उत्तम गिरी निकली। उसी समय श्री गोशाईं जी के शिष्य हो गए। 'वार्ता' में यह भी लिखा है कि ये राजा बीरबल के मथुरिया पंडा थे।

---

(११९)

रांका

दोहा १०४—"भक्तमाल" में लिखा है कि रांका लकड़िहारा दक्षिण देश के पण्डरपुर का निवासी था और बांका उसकी स्त्री थी। सुप्रसिद्ध नामदेव जी (नं० १०४) के घर के पास रहते थे। दोनो बड़े भगवद्भक्त थे। लकड़ी बेच कर निर्वाह करते थे। परीक्षा के लिये नामदेव जी ने एक दिन मार्ग में एक मोहरों की थैली डाल दी, पर इन्होंने उसे न छूआ, उलटा उसे धूल डालकर ढांक दिया। नामदेव जी इसी प्रकार से और भी परीक्षा करके इनपर परम प्रसन्न हुए।

---

(१२०)

धांका

दोहा १०४ (रांका नं० ११९ देखिए)।

---

(१२१)

नरसी मेहता

दोहा १०५, १०६, १०७—नरसी मेहता का चरित्र बहुत प्रसिद्ध है। "भक्तमाल" के अनुसार ये गुजरात जूनागढ़ के रहने वाले थे। नरसी जी ने अपने एक पद में स्वयं लिखा है कि नागर ब्राह्मण थे। समय इनका ठीक निश्चित नहीं, किन्तु सं० १५५० से १६५० के भीतर होना निश्चय है; क्योंकि नरसी जी ने एक पद में कबीर जी और नामदेव जी का नाम लिखा है और इधर नरसी जी का चरित्र नाभा जी ने भक्तमाल में लिखा है; इससे निस्सन्देह इतने समय के बीच में ही इनका प्रादुर्भाव हुआ था। "भक्तमाल" की टीका में लिखा है कि नरसी जी जिस कुल में जन्मे थे वह शाक्त था। एक दिन भावज के ताने पर इन्हें दुःख हुआ और घर छोड़ दिया। शिव जी की कृपा से इन्हें भगवद्भक्ति प्राप्त हुई। इन्होंने एक हुंडी द्वारिका में सांवलिया शाह पर की थी कि जिसे स्वयं द्वारिकानाथ ने महाजन का रूप धारण करके सकारा था। इनकी कन्या का ननसारा भगवान ने स्वयं दिया था। इनके पुत्र का विवाह भगवान ने स्वयं किया था। नरसी जी जब भगवान की मूर्त्ति के सामने नाचते गाते थे, तो भगवान प्रसन्न होकर नित्य एक माला दिया करते थे। यह समाचार सुनकर एक दिन अनायास जूना-गढ़ का राव इनके घर चला आया और कहा कि हमें दिखलाओ कि भगवान कैसे तुम्हें माला दिया करते हैं। यदि तुम आज यह न दिखा सकोगे तो तुम्हारा पाषण्डपना निकाल दिया जायगा। नरसीजी भगवान के सामने गानेलगे और खूब खूब ताने दिए। भगवान ने रीझकर राजा के देखते माला दी। राजा पैरों पर गिरा। यह पद राजा नागरीदास के "पदप्रसङ्गमाला" ग्रन्थ में संग्रहीत है।

(१२२)

नारायणदास (नाभा जी)

दोहा १०८—कहते हैं कि ये जाति के डोम थे। भक्तमाल की टीका में इनको हनुमान वंशीय लिखा है। गद्य भक्तमाल में लिखा है कि तैलङ्ग देश में गोदावरी के समीप उत्तर रामभद्राचल पर्वत पर रामदास नामक एक ब्राह्मण हनुमान जी के अंशावतार रहते थे; बड़े पण्डित थे; उन्हींके पुत्र नाभाजी थे। "भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय" में लिखा है कि भक्तमाल के पूर्व टीकाकारों ने लिखा है कि इनका जन्म हनुमानवंश में हुआ था, परन्तु एक नव्य टीकाकार लिखते हैं कि वैष्णवों की जाति पांति वक्तव्य नहीं है। माड़वारी भाषा में 'डोम' शब्द का अर्थ हनुमान है, इसी-लिये प्राचीन टीकाकारों ने इन्हें हनुमानवंशीय लिखा है। ये जन्मान्ध थे, बचपन ही में पिता मर गए। जब यह पांच वर्ष के थे उस समय इस देश में घोर अकाल पड़ा था। माता इनका लालन-पालन न कर सकी, बन में छोड़कर चली गई। उधर से कील्ह जी अपने शिष्य अग्रदास के साथ आ निकले। उन लोगों को दया आई। इन्हें अपने साथ अपने वासस्थान जयपुर के निकटवर्ती गलता स्थान में ले आए। उक्त महात्माओं की कृपा से इनकी आंख अच्छी हो गई। वहां साधुओं का प्रसाद खाते खाते इनकी बुद्धि निर्मल हो गई। तब अग्रदास जी की आज्ञा से "भक्तमाल" बनाया।

"भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय" के अनुसार इनकी गुरु परम्परा यों है कि रामानन्द जी के शिष्य आशानन्द, उनके कृष्णदास पैहारी, उनके कील्ह, उनके अग्रदास और उनके नाभा जी। परन्तु नाभाजी ने लिखा है कि रामानन्द जी के शिष्य अनन्तानन्द, उनके कृष्णदास पैहारी, उनके शिष्य कील्ह जी तथा अग्रदास और अग्रदास को अपना गुरू लिखा है।

"भक्तमाल" के बनने का समय कुछ भी लिखा नहीं है, परन्तु मेरे अनुमान से यह ग्रन्थ संवत १६४२ के पीछे और संवत १६८० के पहिले बना, क्योंकि संवत १६४२ में श्री विट्ठलनाथ गोसाईं का

परलोक हुआ और उनके पुत्र श्री गिरिधर जी गद्दी बैठे। इन गिरिधर जी के वर्त्तमान रहते "भक्तमाल" बनी, क्योंकि "भक्तमाल" में श्री गिरिधर जी को लिखा है कि "विठ्ठलेशनन्दन सुभग जग कोऊ नहिं ता समान। श्री बल्लभ जू के वंश में सुरतरु गिरिधर भ्राजमान॥" अतः संवत १६४२ के पीछे भक्तमाल का बनना निश्चय है। उधर तुलसीदास जी की मृत्यु के पहिले बनना भी जान पड़ता है, क्योंकि तुलसीदास जी के चरित्र में लिखा है कि "रामचरण रस मत्त रहत अहर्निशि व्रतधारी"। इसमें वर्त्तमान क्रिया के प्रयोग से प्रतीत होता है कि ग्रन्थ रचना के समय तुलसीदास जी वर्त्तमान थे। तुलसीदास जी का मृत्यु समय संवत १६८० है। इसके अतिरिक्त ध्रुवदास जी ने इस "भक्तनामावली" में "भक्तमाल" का वर्णन किया है और ध्रुवदास जी के ग्रन्थ संवत १६८१ से संवत १६९८ तक के बने मिले हैं। अतएव इसी समय के लगभग "भक्तनामावली" भी बनी है और उसके पहिले "भक्तमाल" बनकर प्रसिद्ध हो गया था।

"भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदाय" में मलूकदासी मत की गुरु परम्परा इसप्रकार से लिखी है कि रामानन्द के आशानन्द, उनके कृष्णदास, उनके कोल्ह जी, और उनके मलूकदास। इससे स्पष्ट है कि मलूकदास और नाभा जी समसामयिक थे। मलूकदास रचित "ज्ञानबोध" ग्रन्थ मुझे एक मित्र के पास फ़ारसी अक्षर में लिखा हुआ खण्डित मिला है। उसके अन्त में यह दोहा लिखा है–

"सम्वत् सत्रह सैबरस उनतालीस प्रमान।
माधे कृष्ण चतुर्दशी किये मलूक पयान* ॥"

"भक्तमाल" में मलूकदास जी का वर्णन नहीं है, इससे यह विदित होता है कि "भक्तमाल" बनने के समय तक मलूकदास जी का उदय नहीं हुआ था, नहीं तो अवश्य उनका वर्णन होता, क्योंकि एक तो ये नाभा जी के एक प्रकार से गुरु भाई थे, दूसरे बड़े महात्मा थे। अतएव सम्वत १७०० के कुछ ही पूर्व "भक्तमाल" का बनना प्रतीत होता है।

---

* यह प्रमाण भी पढ़ा जा सकता है।

"भक्तमाल" की हिन्दी में कई एक टीकाएँ बनी हैं, जिनमें से सबसे प्राचीन प्रियादास जी रचित है। प्रियादास जी ने सम्वत् १७६९ में यह टीका बनाई थी। प्रियादास जी ने लिखा है कि इसको मैंने नाभा जी की आज्ञा से बनाया ("ताही समय नाभा जी ने आज्ञा दई लई धारि टीका विस्तारि भक्तमाल की सुनाइए")। अतएव यह टीका सबसे अधिक मान्य है। इसके अतिरिक्त इससे यह भी सिद्ध होता है कि सम्वत् १७०० के पीछे तक भी नाभा जी वर्तमान थे।

डाक्टर ग्रिअर्सन अनुमान करते हैं कि हितोपदेश और राजनीति के अनुवादक नारायणदास और छन्दसार के कर्ता नारायणदास तथा नाभाजी तीनो एकही थे।

---

(१२३)

ध्रुवदास

ग्रन्थकर्ता ध्रुवदास जी गोस्वामी हित हरिवंश जी के शिष्य थे। श्री वृन्दावन में रहते थे। इनके बनाए निम्नलिखित बहुत छोटे छोटे ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं-वृन्दावन सत, सिङ्गार सत, रसरत्नावली, नेहमञ्जरी, रहसिमञ्जरी, सुखमञ्जरी, रतिमञ्जरी, बनबिहार, रङ्गबिहार, रसबिहार, आनन्ददशाविनोद, रङ्गविनोद, निर्तबिलास, रङ्गहुलास, मानरसलीला, रहसिलता, प्रेमलता, प्रेमावली, भजनकुण्डली, बावनबृहदपुराण की भाषा, भक्तनामावली, मनसिङ्गार भजन सत, मनशिक्षा, प्रीति चौबनी, रसमुक्तावली और सभामण्डली। इनमें से केवल तीन ग्रन्थों के बनने का समय दिया है, अर्थात् सभामण्डली संवत् १६८१ में बनी, वृन्दावन सत संवत् १६८६ में और रहसिमञ्जरी संवत् १६९८ में। इससे यह अनुमान होता है कि इनका समय संवत् १६४० से संवत् १७४० के लगभग होगा। इनके विषय में और कुछ विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता, केवल "रास सर्वस्व" के निम्नलिखित छप्पय से विदित होता है कि ये रासलीला के बड़े अनुरागी थे और करहला ग्राम के रासधारियों के प्रेमी थे-

"प्रथम सुमिरि हित* नाम धाम† धामी‡ जु बखाने ।
रसिक जनन के हेतु जुगल परिकर § गुन गाने ॥
बरनी लीला रास प्रतछ तासों मति पागी ।
पुनि पुनि करि अनुकरन ग्राम ललिता अनुरागी ॥
सदा रास रसमत्तहिय सुप्रेम सुधा पूरन करयो ।
बलिजाउँ देस कुल धाम की जहँ ध्रुवदास सु अवतरयो" ॥१॥

---

* हित = गोस्वामी हित हरिवंश जी । † धाम = श्रीवृन्दावन । ‡ धामी = श्री-राधाकृष्ण । § जुगल परिकर = भगवद्भक्त ।